ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शांतिधर्मी

जुलाई, 2014

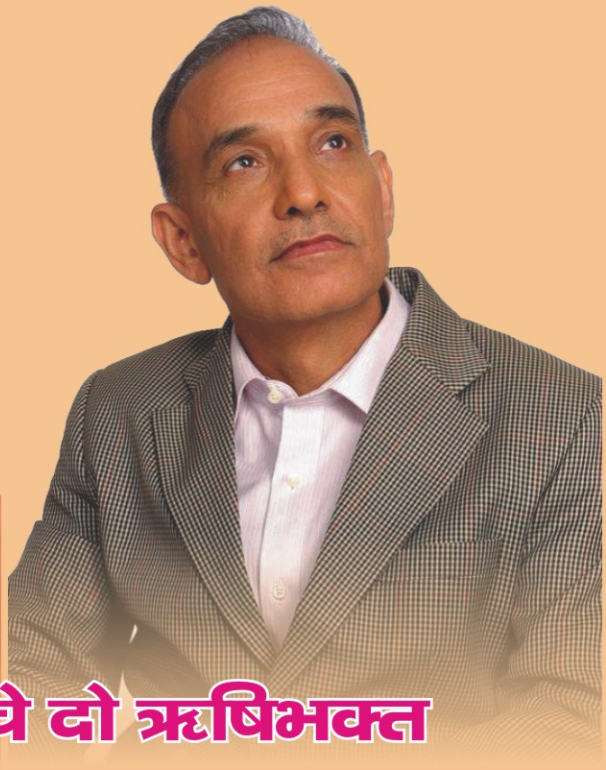

संसद में पहुंचे दो ऋषिभक्त

तपोनिष्ठ, वेदज्ञ,
आर्ष विद्याविद् संन्यासी
स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती
सीकर (राजस्थान)

कर्त्तव्यनिष्ठ पुलिस अधिकारी
के रूप में चर्चित
डॉ. सत्यपाल सिंह
बिजनौर (उत्तर प्रदेश)

हार्दिक शुभकामनाएं

₹10

पूर्णांक
186

नई दिल्ली विश्व हिन्दू परिषद कंझावला जिला द्वारा पाकिस्तान से आये हिन्दू परिवार के
तारो जी की बेटी गोपनी की शादी धूमधाम से की गई

शान्तिधर्मी परिसर में आयोजित मासिक पूर्णिमा महोत्सव के अवसर पर
यज्ञ में आहुतियाँ डालते हुए महानुभाव

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शान्तिधर्मी

जुलाई २०१४

वर्ष : १६ अंक : ६ आषाढ़ २०७१ विक्रमी
स ष्टि संवत्-१६६०८५३११५, दयानन्दाब्द : १६२

सम्पादक : चन्द्रभानु आर्य
(चलभाष ०८०५६६-६४३४०)
संयुक्त सम्पादक : सहदेव समर्पित
(चलभाष ०६४१६२-५३८२६)
उपसम्पादक : सत्यसुधा शास्त्री
प्रबंध संपादक : सुभाष श्योराण
आदरी सम्पादक : यज्ञदत्त आर्य
सह-सम्पादक : राजेशार्य आट्टा
डॉ० विवेक आर्य
नरेश सिहाग बोहल
सहयोग : आचार्य आनन्द पुरुषार्थी
श्रीपाल आर्य, बागपत
महेश सोनी, बीकानेर
भलेराम आर्य, सांघी
कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी
विधि परामर्शक : जगरूपसिंह तंवर
कार्यालय व्यवस्थापक : रविन्द्रकुमार आर्य
कम्प्यूटर सज्जा : बिशम्बर तिवारी

मूल्य
एक प्रति : १०.०० रु.
वार्षिक : १००.०० रु.
आजीवन : १०००.०० रु.

कार्यालय :
७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द–१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ६४१६२–५३८२६
ई-मेल-shantidharmijind@gmail.com

प्रेरणा स्तम्भ

विचार करो मित्र, नेत्रों से काले, पीले, हरे को देख सकते हैं? ईश्वर के भी कोई रंग होता तो हमें दिखलाने में कोई उज्र नहीं था। जिस नेत्र से ईश्वर को देख सकते हैं वह नेत्र अगर तुम्हारे पास हो तो हम अभी दिखला सकते हैं।

–पं० गणपति शर्मा

क्या? कहाँ?....

आलेख
सबके अलग अलग भगवान् क्यों? ८
सच्चे ब्राह्मण ही राष्ट्र के रक्षक होते हैं ६
आस्था और अंधविश्वास १२
शिक्षा : क्या करना था, क्या कर दिया १४
गृहिणियों का आर्थिक योगदान १६
हम संसार के किसी भी प्राणी से द्वेष न करें २०
केवल शास्त्र को जानने से ब्रह्मज्ञान! २२
हल्दी के गुणों को जानिये/वजन कम करने के कुछ आसान उपाय २४
हम अपने देश को सम्पन्न क्यों नहीं बना सकते (विदेश की चिट्ठी) ३०
कौन है ब्रह्मविद्या का अधिकारी (अन्ततः) ३४
कहानी/प्रसंग : रानी सारंधा (इतिहास कथा) : १८,
महर्षि का धर्म दर्शन- २७ शूद्र का सहारा-२७, आपस की फूट-२७
ईश्वर विश्वास-२७, व्यवहार बुद्धि -२८,
कविताएँ- १५, १७,
स्तम्भ-आपकी सम्मतियाँ ५, अनुशीलन, सोम सरोवर ६
चाणक्य नीति, अमृतवचनावली ७, सामयिक चिन्तन-८,
बाल वाटिका २६, भजनावली २६, **समाचार सूचनाएँ**

वेद-विचार — सामवेद आग्नेय पर्व

पद्यानुवाद : स्व० आचार्य विद्यानिधि शास्त्री

जज्ञानः सप्त मातृभिर्मेधामाशासत श्रिये।
अय ध्रुवो रयीणां चिकेतदा।।१०१।।

सात[1] मातृसम छन्दों की प्रिय वाणी से उद्बुद्ध[2] हुए।
दिखलाते हो सात[3] तरह की ज्वालाएँ तुम शुद्ध हुए।।
श्री मेधा की आशा रखते सब तुमको हैं मान रहे।
प्रिय ऐश्वर्यों के ध्रुव[4] पद को केवल तुम ही जान रहे।।

पदार्थ : १=गायत्री, उष्णिक् आदि सात मुख्य छंद, २=प्रकट, प्रकाशित, ३= काली कराली आदि सात प्रसिद्ध अग्नि की लपटें, ४= स्थिर, निश्चित स्थान

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

❑चन्द्रभानु आर्य

ठीक कहा स्वामी जी लेकिन--

२३ सौ वर्ष पहले आदि गुरु शंकराचार्य जी ने वेद मत की पुनर्स्थापना के लिए अथक पुरुषार्थ किया था। उन्होंने देश भर में घूम-घूम कर नास्तिक मत वालों से शास्त्रार्थ किये थे और वैदिक मत की स्थापना कर दी थी। इसी के परिणामस्वरूप दुर्भावनावश उनको कोई विषैला पदार्थ धोखे से खाने में दे दिया गया और उनका देहान्त हो गया। उन्होंने वेद मत की रक्षा के लिए चार मठों की स्थापना की। एक शास्त्रज्ञ संन्यासी का जो कर्त्तव्य होना चाहिए वही उन्होंने किया। धर्म का रक्षक होने के कारण उनकी सारे देश में बहुत प्रतिष्ठा हुई। उनके मठों के उत्तराधिकारियों की भी होती रही। लेकिन धर्म की रक्षा के लिए बाद के गद्दीधारी प्रायः उदासीन ही रहे। अब बहुत समय के पश्चात् एक शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द जी ने धार्मिक जगत् के मार्गदर्शन के लिए एक अच्छी बात कही है-- कि साईं बाबा की पूजा नहीं करनी चाहिए। इस पर जो साई बाबा के पूजक थे, उनमें तो रोष होना स्वाभाविक हो सकता है, पर उनसे ज्यादा हो हल्ला उन लोगों ने मचाया जो किसी की पूजा नहीं करते। मीडिया के माध्यम से एक बात को बहुत जोर शोर से उठाया गया कि ऐसा कह कर उन्होंने भक्तों की आस्था को चोट पहुंचाई है। इस बात पर बहस होनी चाहिए थी कि साई बाबा की पूजा होनी चाहिए तो क्यों? और नहीं होनी चाहिए तो क्यों नहीं होनी चाहिए? पर लगता है इस अज्ञान अंधकार के काल में हमारा सत्य को सुनने का अभ्यास ही समाप्त हो चुका है। हम कोई वह बात सुनना भी नहीं चाहते जो हम नहीं मानते-- उस पर विचार करके सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने की तो बात ही कुछ और है। एक बहुत बड़े अखबार के सम्पादक ने तो बहुत बड़ा लेख लिख मारा कि ऐसा कहने वाले शंकराचार्य होते कौन हैं? यह 'होते कौन हैं' हमारी संस्कृति नहीं है। हमारे यहाँ तर्क को ऋषि कहा गया है। बिना सोचे समझे या किसी जानकार से पूछे बिना तो हम कुछ सौ रुपये का सौदा नहीं करते-- फिर यह तो जीवन भर का सौदा है और सच कहिए तो शाश्वत जीवन का।

संन्यासी को सत्य कहने में डर नहीं होना चाहिए। वह मानापमान और हानि लाभ से ऊपर होता है। स्वामी जी ने साईं बाबा की पूजा का निषेध कर दिया। इसका कोई शास्त्रीय आधार तो होगा ही, अन्यथा स्वामी जी क्यों मना करते। १८१८ में कहते हैं इन बाबा की मृत्यु हुई, और इनकी पूजा तो अभी थोड़े दिनों से ही होने लगी है। किसी शास्त्र में या परम्परा में इनकी पूजा का उल्लेख नहीं है। लेकिन स्वामीजी ने यह स्पष्ट रूप से क्यों नहीं कहा कि ईश्वर के स्थान में किसी और की पूजा नहीं करनी चाहिए चाहे वह कोई भी क्यों न हो। आपने कहा कि अवतारों की पूजा करनी चाहिए-- आपने सत्य को अधूरा क्यों छोड़ दिया? अवतारों की पूजा का भी कोई शास्त्रीय आधार नहीं है। आपको जनता का मार्गदर्शन पूरी तरह से करना चाहिए था। आप जैसे निर्लिप्त संन्यासी को वस्तुस्थिति बतानी चाहिए थी। आपको उसकी पूजा का निर्देश देना चाहिए था, जिसकी पूजा ब्रह्मा, विष्णु, राम, कृष्ण, शिव, हनुमान् आदि महान् पुरुष करते थे।

दर्शनकार ने कहा है-'उपदेश्योपदेष्ट्रत्वात्तत्सिद्धिः इतरेऽथ अंधपरम्परा।' जब सच्चे उपदेशकों/गुरुओं का अभाव होता है तो अंध परम्पराएँ फैलती हैं। इस अवस्था में बुद्धिमान् लोगों को गुरुओं की भूमिका स्वयं निभानी होगी। ये रोज-रोज नए-नए भगवान् क्यों पैदा हो रहे हैं? क्या कोई ज्यादा ही भक्ति उमड़ रही है? असल में इस बौद्धिक दिवालियेपन को ये तथाकथित भक्त भी जानते हैं और इनको बहकाने वाले भी। वास्तव में ये भक्त न तो भक्ति करने जाते हैं और न इनके गुरु इनको सही मार्ग दिखाना चाहते हैं। इनको ईश्वर और गुरुओं से इसीलिए प्रेम है क्योंकि इनको आशा है कि वह इनकी मनोकामनाओं को पूर्ण करेगा। अगर सर्वेक्षण किया जाए तो पता चलेगा कि हजार में से दो चार भक्तों की मनोकामनाएँ पूर्ण होती होंगी, भीड़ तो इनके प्रचार तंत्र से होती है। जिनकी कामनाएँ पूरी नहीं होतीं वे चुपचाप बैठ जाते हैं, जिनकी पूरी हो जाती हैं, वे इनके प्रचार तंत्र का हिस्सा बन जाते हैं।

मनोकामना पूर्ण करवाने के लिए भक्ति करने वालों को पहले यह विचार करना चाहिए कि वे कौन सी मनोकामनाएँ हैं जो केवल ईश्वर ही पूरी कर सकता है? धन, सम्पत्ति, परिवार, धरती की मनोकामनाएँ तो एक धनाढ्य व्यक्ति भी पूरी कर सकता है। जिस व्यक्ति में उत्कट इच्छा हो तो धन पुत्र कलत्र तो संसार में उसको मिल ही जाते हैं। पर यह ईश्वर की पूजा का उद्देश्य नहीं है। ईश्वर की स्तुति करने से ईश्वर में प्रीति होती है, उसके संग से अपने गुण कर्म, स्वभाव सुधरते हैं। प्रार्थना करने से व्यक्ति का अभिमान समाप्त हो जाता है। अच्छे कार्य करने में उत्साह होता है

और ईश्वर की सहायता मिलती है। ईश्वर की उपासना करने से उस परब्रह्म से मेल होता है और अन्ततः उससे साक्षात्कार होता है। ईश्वर की भक्ति करने का उद्देश्य अपने आत्मा की उन्नति करना है, अपने दोषों का निराकरण करना है और मुक्ति को प्राप्त करना है। यही मनोकामना है जो ईश्वर पूरी करता है। संसार के भोग पदार्थ तो उसने हमारे कर्मों के आधार पर पहले ही कृपापूर्वक प्रदान कर दिये हैं। इन पदार्थों को बढ़ाने के लिए, कल्याणकारी बनाने के लिए पुरुषार्थ करना हमारा कर्त्तव्य है।

भक्ति की इस कसौटी पर कसें तो उन लोगों की पूजा भी क्यों करनी चाहिए जिनकी पूजा करने के लिए शंकराचार्य जी ने कहा। हाँ, वे हमारे महान् पूर्वज पूरी मानवता के लिए एक धरोहर हैं। उनका उज्ज्वल चरित्र जानने से और उनका अनुकरण करने से अवश्य हमारे चरित्र की उन्नति हो सकती है। उनके चरित्र का अनुकरण होना चाहिए। लेकिन उनकी 'पूजा' करने वालों ने तो उनके चरित्र को ही विचित्र बना दिया है। कोई उन्हें मनियार बता रहा है, कोई उन्हें डांसर बता रहा है। हरियाणा में एक भक्त कह रहा है कि मेरा भगवान नीलकण्ठ पर चढ़कर एक बालटी भांग पी गया और मटकने लगा। और यही इनकी पूजा है। मैं सोचता हूँ कि हमारे महापुरुषों पर बिना प्रमाण के इस प्रकार के लांछन लगाये जाते हैं तो हमारी आस्थाओं पर ठेस क्यों नहीं पहुंचती?

ईश्वर की पूजा के नाम पर तो केवल ईश्वर की ही पूजा होनी चाहिए। जैसे किसी के बाप का स्थान कोई और नहीं ले सकता वैसे ही ईश्वर का स्थान भी कोई और नहीं ले सकता। जहाँ तक उसके भिन्न-भिन्न रूपों की बात है, तो काल्पनिक रूपों की आवश्यकता तब होती है जब वह वास्तविक रूप में हमारे पास न हो। जब ईश्वर सदा सर्वदा हमारे आत्मा में विराजमान है तो उसके काल्पनिक रूपों की क्या आवश्यकता है?

आज धर्म के क्षेत्र मे जितनी अराजकता फैली है, उतनी और किसी क्षेत्र में नहीं है। जो मरजी भगवान् बन बैठता है और लोगों की मनोकामना पूरी करने का दावा करने लगता है। और जनता उनके भ्रमजाल में पड़कर सच्ची भक्ति के आनन्द से वंचित हो जाती है। आज मानवता को एक सच्चे धर्म प्रदर्शक की आवश्यकता है। शंकराचार्य जी! आपने इसकी शुरुआत कर दी है। आप बधाई के पात्र हैं। पर भक्तों को पूरी बात बताएँ। अवतारों की नहीं, उसकी पूजा का उपदेश दें जिसकी पूजा 'अवतार' भी करते थे। हमने सुना है कि आप इस विषय पर शास्त्र चर्चा के लिए धर्म संसद का आयोजन कर रहे हैं। आप से निवेदन है कि आप उसमें भक्तों को यह भी बताएँ कि वेद में ईश्वर को 'अज' (जन्म न लेने वाला) 'अकायम्' (जो शरीर धारण नहीं करता) अस्नाविरं (नस नाड़ी के बंधन में नहीं आता) कहा गया है।

आपकी सम्मतियाँ

जून माह के शांतिप्रवाह में आपने विकास की सच्ची अवधारणा पर सफलता से प्रकाश डाला है। कृषि भारत का सबसे बड़ा उद्योग है, कृषक और कृषि से जुड़े श्रमिक को उबारना विकास के लिए सबसे ज्यादा आवश्यक है। डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का विद्धत्तापूर्ण लेख पढ़कर नई स्फूर्त्ति अनुभव की। अन्य सभी रचनाएँ भी श्रेष्ठ हैं। गुरुवर स्वामी भीष्म जी की रचनाएँ समय समय पर प्रकाशित करते रहें। आप निष्ठापूर्वक धर्म प्रचार का पुनीत कार्य कर रहे हैं। आप बधाई के पात्र हैं। मैं सदैव आपके साथ हूँ।

श्रीपाल आर्योपदेशक वैदिक मिशनरी
आर्य भवन, खेड़ा हटाना, जनपद बागपत (उ० प्र०)

✉

जून अंक मिला। बड़ी प्रसन्नता हुई। कशमीर के इतिहास के बारे में पढ़कर रोंगटे खड़े हो गए। साथ ही मन में एक पीड़ा भी हुई कि हमारे ही लोगों के अंधविश्वास और मूर्खता के कारण हमारे देश की यह दुर्दशा हुई। आज इस विज्ञान के युग में भी देश से जातिवाद, छुआछूत मिटी नहीं है बल्कि नए नए रूप में सामने आ रही है। सौन्दर्य की परख कहानी ने प्रभावित किया। गुणों की परख तो कोई सच्चा पारखी ही कर सकता है।

मनजीत कादियान,
बस स्टैण्ड के पीछे, पानीपत (हरियाणा)

✉

बाल वाटिका की सामग्री बहुत अच्छी लगी। नरेन्द्र कुमार द्वारा प्रस्तुत कहानी मालिन की देशभक्ति ने प्रभावित किया। भजनावली पढ़कर भी अच्छा लगा। डॉ० मनोहरदास अग्रावत जी ने जामुन के बारे में नवीन जानकारी देकर पाठकों पर उपकार किया है। इस अंक की सामग्री भी संग्रहणीय है। अमनदीप जी वैवाहिक जीवन के लिए शुभकामनाएँ शांतिधर्मी के माध्यम से स्वीकार करें।

अमित सोनी द्वारा युनाईटिड एजेन्सीज
बस स्टैंड कोटपुतली, जिला जयपुर (राजस्थान)

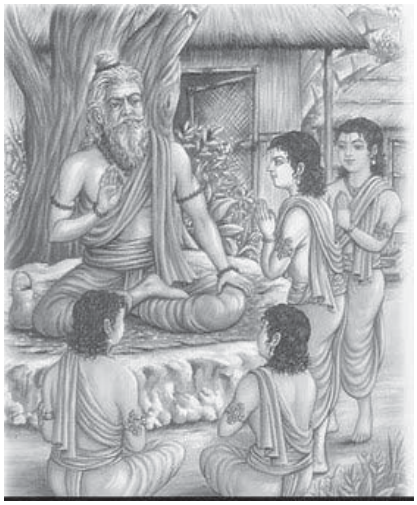

सोम सरोवर (तृतीय खण्ड)

गायत्री छन्दः । षड्ज स्वरः

❒पं० चमूपति जी

इन्द्र की गढ़ियाँ

अया वीती परिस्त्रव यस्त इन्दो मदेष्वा।
अवाहन्नवतीर्नव।।९।।

ऋषि :- अमहीयुः = पृथिवी की नहीं, द्युलोक की उड़ान लेने वाला।

(इन्दो) संजीवन सुधारक! (मदेषु) नशों में से (यस्ते) जिस तेरे नशे ने (नव) नौ इन्द्रियों-इन्द्र की गढ़ियों को (नवतीः) नब्बे बार (अवाहन्) अपने अधीन किया है (अया वीती) उसी कान्ति से (परिस्रव) सब ओर बह निकल।

देह पुरी के नौ द्वार- दो आँखें, दो कान, दो नासिकायें, एक मुख और दो मल-मूत्र के मार्ग-ये नौ द्वार क्या हैं? आत्मा की- इन्द्र की गढ़ियाँ हैं। इन्हीं के द्वारा ज्ञान की और भोग की भी प्राप्ति होती है। दृष्टि अच्छी हो या बुरी-दोनों प्रकार का दृष्टिपात आँखों के द्वारा होता है। कान पवित्र शब्दों का भी पात्र है अपवित्र वचनों का भी। ऐसी ही घ्राण, रसना तथा गुप्त इन्द्रियाँ। सच तो यह है कि जिन इन्द्रियों को साधन बनाकर मनुष्य सांसारिक आनन्दों का भोग करता है, आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति के साधन भी वही हैं। आवश्यकता केवल इन इन्द्रियों पर आत्म-वशीकार का पहरा बैठाने की है। इन में प्रभु-भक्ति का प्रवाह बहा दो। इनको भक्ति रस में आप्लावित कर दो। बस फिर इन्हीं इन्द्रियों का भोग ही आत्मा परमात्मा का योग हो जायेगा। आँखों से हम वही दृश्य देखते जायें जो नित्य प्रति इनके द्वारा देख रहे हैं। केवल इन में प्रभु की लीला की झांकी रहे। कानों से हम वही शब्द सुनें जो प्रतिक्षण सुन रहे हैं। केवल इन में गूंज रहे प्रभु के सन्देश की लय कर्ण गोचर होती रहे। फिर हमारा सांसारिक भोग ही योग का रूप धारण कर लेता है।

हम खायें, पियें, सोयें, जागें, चलें, फिरें, खेलें, कूदें ये सब चेष्टायें करें, परन्तु इनका अभिप्राय प्रभु की आराधना हो, उसकी भक्ति हो, उस के प्यारों की सेवा हो। बस इसी से हमारा सम्पूर्ण जीवन एक लम्बी संध्या हो जायगा। यह संध्या हमारी नवों इन्द्रियों ने दसों बार की- ९ गुणा १०-नब्बेयों बार की। अनादि प्रभु से अनादि आत्मा का अनेक बार मेल हुआ। पुत्र पिता की गोदी में कितनी बार लाड-चाव लाभ कर चुका है? इसे कौन गिनाये? इस वियोग-वेला में उन मधुर-मिलापों की स्मृति होती है। प्रभो! वात्सल्य-रस का वह मधुर प्रवाह फिर बहाओ! अपने पवित्र प्रेम के प्रवाह में हमारी सम्पूर्ण इन्द्र-पुरियों को डुबा दो। कृपा-कोरों की एक बाढ़ सी ला दो। हमारा खोया हुआ बाल पन लौटा दो। हम सौम्य हो जायें-सोम रस का पान करने वाले-मूर्त सोम।

चाणक्य-नीति

सप्तमः अध्यायः
(क्रमागत)

अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च।
वञ्चनं चापमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत्।।१।।

बुद्धिमान् व्यक्ति इन बातों को प्रकाशित न करे, दूसरों को न बताए- धन का नाश या हानि हो जाने पर, मन की पीड़ा, घर में दुश्चरित=गलत कार्य, कोई ठग ले, और कहीं अपमान हो जाए। कवि ने कहा है-

हँसी ही लोग उड़ाएँगे 'प्रकाश'
व्यथा मन की न किसी से कहिये।।

धन-धान्य प्रयोगेषु विद्या संग्रहेषु च।
आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेत्।।२।।

अन्न धन आदि के प्रयोग या लेन देन में, विद्या संग्रह करने में, भोजन में और व्यवहार में, जो अनावश्यक लज्जा को छोड़ देता है, वह सुखी होता है।

सन्तोषाऽमृत तृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
न च तद्धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम्।।३।।

जो सन्तोष रूपी अमृत को पाकर तृप्त हो गए हैं, उनको जो सुख मिलता है वह सुख उन लोगों को कभी नहीं मिल सकता जो धन के लालच में दिन रात इधर उधर मारे मारे फिरते हैं। सन्तोष ही सबसे बड़ा धन है।

सन्तोषस्त्रिषु कर्त्तव्यः स्वदारे भोजने धने।
त्रिषु चैव न कर्त्तव्यो तपस्यध्ययनदानयोः।।४।।

तीन चीजों में मनुष्य को सन्तोष करना चाहिए- अपनी पत्नी में, भोजन में और धन में। पर इन तीन चीजों में सन्तोष नहीं करना चाहिए- तप में, अध्ययन में और दान में। तप के द्वारा सहिष्णुता को, अध्ययन के द्वारा विद्या को और दान के द्वारा धन की पवित्रता को निरन्तर बढ़ाते रहना चाहिए।

विप्रयोर्विप्रवह्न्योश्च दम्पत्योः स्वामिभृत्ययोः।
अन्तरेण न गन्तव्यं हलस्य वृषभस्य च।।५।।

दो विद्वानों के बीच में से, यज्ञ करने वाले व यज्ञ की अग्नि के बीच में से, पति पत्नी के बीच में से, स्वामी और सेवक के बीच में से और बैल तथा हल के बीच में से होकर नहीं निकलना चाहिए।

अमृत वचनावली

❑डॉ० रामभक्त लांगायन आई ए एस (से० नि०)

कामनामुपभोगेन काम एवाभिवर्धते।
असंतोषफला ह्येता वासनास्तु सुदुर्भराः।।२३।।

भोग भोगने से समाप्त नहीं होते, वे और भी बढते हैं। वासनाएँ इसलिए पूरी नहीं होतीं कि पूरा होना उनका स्वभाव नहीं है। केवल सन्तुष्टि का समापन है, वासनाओं और तृष्णाओं का नहीं।

गूढः पाषाणखण्डोऽपि याति हीरकतां यथा।
क्रोधोऽपि सुचिरं गूढः कारुण्यमवगाहते।।२४।।

जैसे कोयला बहुत समय तक दबा रहने से हीरा बन जाता है, उसी प्रकार मनुष्य का जीवन क्रोध को दबाने से करुणामय और स्वर्णमय बन जाता है।

पात्रभेदात् पयोबिन्दुस्त्रैगुण्यमवगाहते।
कर्पूरत्वं, मौक्तिकतां, विषत्वं संगभेदतः।।२५।।

जैसे पानी की बूँद संगति से क्रमशः कदली, सीप और सर्प के मुख में पड़ने से कपूर, मोती और विष बन जाती है, उसी प्रकार जो व्यक्ति जिस प्रकार के

ज्ञानशतकम्

व्यक्तियों की संगत करता है, वैसा ही उसे फल मिलता है, अर्थात् वैसा ही वह हो जाता है।

भुक्ता भोगाः पुनर्भुक्ताः भोगाः भुक्ता पुनः पुनः।
भोगनामुपभोगेन भोगभुग् नैव शाम्यति।।२६।।

कितना ही भोगो, भोगों का अन्त नहीं है। तृष्णा दुष्पूर है। वासना पूरी नहीं होती। वह मृगमरीचिका है।

शीतायस्ताडनं व्यर्थं व्यर्थमूर्जाविवर्जितम्।
शरीरं, नैव वार्धक्ये रामरामेण सद्गतिः।।२७।।

जिस प्रकार ठण्डे लोहे को पीटने से कुछ नहीं बन सकता, इसी प्रकार बुढ़ापे में ऊर्जा खत्म होने पर राम राम रटने से परमात्मा नहीं मिल सकता। ऊष्मा से भरा जीवन ही रसमय बन सकता है और परमात्मा को प्राप्त कर सकता है।

जपेन तपसा वापि सुतीर्थैर्न प्रसीदति।
करुणाधर्मवैराग्यैरीशः साम्ये प्रसीदति।।२८।।

परमात्मा जप से, तप से या तीर्थों पर जाने से प्रसन्न नहीं होता। करुणा, धर्म-पालन और निरासक्त होने से ही वह प्रसन्न होता है।

सामयिक चिन्तन

सबके अलग अलग भगवान क्यों

❏नरेंद्र आहूजा विवेक 502 जी एच 27 सैक्टर 20 पंचकूला मो. 09467608686

आजकल इस गंभीर विषय पर बहुत हल्के स्तर पर चर्चा के नाम पर एक दूसरे पर दोषारोपण चल रहा है। ऐसा लगता है जैसे दलदल में खड़े लोग एक दूसरे पर कीचड़ उछाल रहे हैं। इनकी अपनी कोई पहचान शेष नहीं बची, बस कीचड़ सने चेहरे और कीचड़ सने हाथ। पूरी बहस में कोई सत्य सुनने को तैयार नहीं लगता है। जैसे अंधेरा अंधेरे से लड़ रहा हो। इस पूरे झगड़े में आखिर उपास्य कौन? हम मनुष्य किसकी उपासना करें, इसका उत्तर देने को कोई तैयार नहीं। सबके अपने निहित स्वार्थ हैं और राष्ट्र के नाम पर एकजुट हो रहे समाज को उनकी आस्था के संवेदनशील मुद्दे पर तोड़ने की गहरी साजिश हो रही है।

प्रश्न उत्पन्न होता है कि आखिर उपास्य कौन, सभी मनुष्य किसकी उपासना करें और किस सभी को स्वीकार्य एक उपासना पद्धति से टूटते बिखरते समाज को एकजुट किया जा सकता है? इन गंभीर विषयों पर चिंतन करते हुए हम पाते हैं कि क्रान्तदर्शी देव दयानन्द ने जैसे इन आने वाली समस्याओं को पहले ही भाँप लिया था। शायद इसीलिए महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज के दूसरे नियम में ईश्वर के सच्चे स्वरूप का वर्णन करते हुए स्पष्ट निर्देश दिया कि उसी की उपासना करनी योग्य है। ईश्वर के सत्य स्वरूप का वर्णन करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं– ईश्वर सच्चिदानंदस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

महर्षि दयानन्द ने एक सत्य ईश्वरीय स्वरूप की कसौटी हमारे सामने रख दी। अब यदि हम आपस में लड़ने वाले सभी लोग अपनी अंधश्रद्धा के कूप से बाहर आकर ईश्वर के विराट् सत्य स्वरूप पर अपने अपने तथाकथित देवताओं, अवतारों, स्वयंभू धर्म के ठेकेदारों को कसें तो पायेंगे कि ईश्वर के स्वरूप की कसौटी के निकट भी कोई नहीं फटकता। यदि हम थोड़ा और चिंतन करें तो पायेंगे कि इनमें से अधिकांश ने अपने अपने जीवन काल में ऊपर वर्णित ईश्वर के सत्य स्वरूप की ही उपासना की। वे तो स्वयं उसी एक ईश्वर के उपासक थे। इसका अर्थ तो यह हुआ कि हमने उनके जीवन से ज्ञान लेने के स्थान पर अपनी अंधश्रद्धा के वशीभूत इन भक्तों को ही भगवान बना दिया और सच्चे उपास्य देव को भुला दिया।

आखिर क्या कारण था कि हम अपनी श्रेष्ठतम पुरातन सनातन वैदिक संस्कृति को भूल गए और इतना अधिक भटक गए कि उस एक ईश्वर के सत्य स्वरूप को भूलकर हमने अपनी अपनी कल्पनाओं के भगवान गढ़ लिए और बिना उन्हें सत्य की कसौटी पर कसे उनकी पूजा अलग अलग पद्धति से प्रारम्भ कर दी। पहले जहाँ हमारी अबोधता से हमने अपने लिए अलग अलग तथाकथित भगवान बनाए और फिर अलग अलग पूजा पद्धतियाँ विकसित करते हुए हम अलग अलग पंथों संप्रदायों में कबीलों की तरह बंट गए। ये अलग अलग पंथ संप्रदाय अब एक दूसरे पर दोषारोपण करते आपस में लड़ने लगे। वैसी स्थिति आज एक बार फिर बन चुकी है। अब हमें गंभीरता से चिंतन करना होगा कि हमें इस असत्य, पाखंडों, अंधविश्वासों, कुरीतियों की अंधी श्रद्धा में फंसा कर आपस में लड़वाने वाले कौन हैं और इसके पीछे उनके क्या निहित स्वार्थ हैं?

मुगलों के शासन काल से ही इस समाज को तोड़ने की गहरी साजिश प्रारम्भ हुई थी और फूट डालो राज्य करो की नीति का अनुसरण अंग्रेजी शासन काल में भी हुआ। हम कहने को वर्ष १९४७ में स्वतंत्र हो गए पर शायद मानसिक गुलामी की अवस्था से बाहर नहीं निकल पाए और आज भी असत्य के अंधेरे कुएं में मेंढ़कों की तरह टर्रा रहे हैं और आपस में लड़कर खुश हैं। अलग अलग नवीन पंथों संप्रदायों में बंटे हम सभी केकड़ा संस्कृति के अनुगामी हो चुके हैं, जिसमें खुले बर्तन में भी कोई केकड़ा उससे बाहर नहीं आ पाता क्योंकि दूसरा उसकी टांग खींच लेता है और सभी बाहर निकलने का अवसर होने के बावजूद उसी में फंसे रहने के लिए विवश होते हैं।

आज यदि हम इन पंथों, संप्रदायों, डेरों, तथाकथित धर्म के ठेकेदारों के चंगुल से बाहर निकल कर एकजुट होकर अपने परिवार, समाज वा राष्ट्र के उत्थान में लगना चाहते हैं तो हमें इन कबीलों के बंधनों को छोड़कर ईश्वर के सत्यस्वरूप को समझकर उसी की उपासना करनी होगी।

राष्ट्र-चिन्तन

वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः

सच्चे ब्राह्मण ही राष्ट्र के रक्षक होते हैं

❑**रामफल सिंह आर्य**, म० नं० 87/एस-3, बी.एस.एल कालोनी
सुन्दरनगर, जिला मण्ड़ी, हि०प्र० 175019

राष्ट्र को जगाने वाले योग्य व्यक्ति जब इस पवित्र भावना से कार्य करते हैं तो निश्चित रूप से वह राष्ट्र उन्नतिशील बनता है, जागता है। इसके विपरीत जब स्वार्थी, लोभी एवं क्षुद्राशय लोगों की बातों में आकर लोग पाखण्ड में फंसते हैं तो महान् दुःख एवं हानि भी उठानी पड़ती है।

ईश्वरीय वाणी वेद की यह सूक्ति पुकार-पुकार कर कह रही है कि पुराहित लोग, विद्वान लोग, प्रचारक लोग, ब्राह्मण लोग सदैव राष्ट्र को जगाने का कार्य करें, जिससे कि किसी प्रकार की अव्यवस्था कभी पनपने न पाये और यदि कोई अव्यवस्था हो भी तो वह दूर हो जाये।

वेद माता की यह सूक्ति राष्ट्र-भक्ति की भावना से ओत-प्रोत है जो युग-२ से मानव का पथ प्रदर्शन करती आई है और आगे भी करती रहेगी। इसमें बताया गया है कि विद्वान् तथा राष्ट्र हितैषी लोगों का क्या कर्तव्य है। राष्ट्र का हित किस प्रकार किया जा सकता है। वे सदैव राष्ट्र के मार्गदर्शक बनकर कार्य करें। ठीक वैसे जैसे यज्ञवेदी पर बैठा हुआ पुरोहित यजमान का मार्गदर्शन करता हुआ अपने सुन्दर एवं कल्याणकारी उपदेश के द्वारा सदैव उससे समुचित प्रकार से यज्ञ सम्पादन करवाता है जो कि यजमान एवं अन्यों के लिए अभिलक्षित फलों का प्राप्त कराने वाला होता है। पुरोहित तो कहते ही उसे हैं जो दूसरों के हित के लिए कार्य करता हो, पुरो हितं रतः इति पुरोहितः। यज्ञवेदी पर जो कार्य पुरोहित करवाता है, राष्ट्र वेदी पर वही कार्य ब्राह्मण द्वारा सम्पन्न होता है।

ब्राह्मण कौन? जो पक्षपात रहित, वेद के सच्चे विद्वान्, धर्म कर्म को ठीक-२ जानने वाले, सबके हित की बात बोलने वाले एवं छल कपट रहित विद्वान् हैं उन्हीं को उक्त सूक्ति में पुरोहित की या ब्राह्मण की संज्ञा दी गई है, अन्यों को नहीं। ऐसे योग्य व्यक्ति जब राष्ट्र को जगाने का कार्य करते है तो उस राष्ट्र का उत्थान कोई भी रोक नहीं सकता। धुन के धनी सच्चे ब्राह्मण आचार्य प्रवर चाणक्य ने जिस समय इस मन्त्र से प्रेरणा पाकर राष्ट्र को जगाने का कार्य किया तो एक क्रांति आ गई और दुष्टों तथा अन्यायी शासकों को मुंह छिपा कर भागना पड़ा। आधुनिक युग में महर्षि दयानन्द जी महाराज ने जब राष्ट्र का पतन देखा तो राष्ट्र वेदी के वे सच्चे पुरोहित बन गये और वह कर दिखाया जिसकी किसी ने कल्पना तक न की थी। अपने परिवार के विपुल धन वैभव को, माता-पिता आदि के स्नेह बन्धनों को तोड़ते समय जिसके मन में तनिक सा भी दुःख या संशय न हुआ, जो ममता की मूर्ति माता को रोता बिलखता छोड़ कर घर से चला आया और कभी फिर उस घर की ओर दृष्टिपात भी न किया, वही देव दयानन्द जब एक माता को गंगा में अपने कलेजे के टुकडे को प्रवाहित करके उसके ऊपर डाले हुए कफन के टुकड़े से अपनी लज्जा ढांपते हुए देखता है तो जार-२ रोता है। रात्रि को उसे नींद नही आती और वह राष्ट्र के उत्थान हेतु विचार करता है कि क्या यह वही देश है जो कभी विश्व का गुरु और सोने की चिड़िया हुआ करता था। वह राष्ट्र-वेदी पर बैठ कर मानो प्रण करता है कि मैं इस देश में किसी को मूर्ख, अज्ञानी, अनपढ़, निर्बल, दरिद्र एवं असहाय नहीं रहने दूँगा, किसी के द्वारा भी अपने इन लोगों का शोषण न होने दूँगा चाहे इसके लिए मुझे कोई भी मूल्य क्यों न चुकाना पड़े। प्रिय पाठकगण! यह है उपर्युक्त सूक्ति की मूल भावना, जिसका उपदेश वह कर रही है।

राष्ट्र को जगाने वाले योग्य व्यक्ति जब इस पवित्र भावना से कार्य करते हैं तो निश्चित रूप से वह राष्ट्र उन्नतिशील बनता है, जागता है। इसके विपरीत जब स्वार्थी, लोभी एवं क्षुद्राशय लोगों की बातों में आकर लोग पाखण्ड में फंसते हैं तो महान् दुःख एवं हानि भी उठानी पड़ती है। खेद है कि आज लोग सच्चे ब्राह्मणों की न मानकर, अनेकों

छल-प्रपंच रच कर, गुरुडम फैलाकर, वाक् जाल के द्वारा जनता के धन पर गीध दृष्टि जमाये हुए स्वार्थी, ढोंग और धूर्तता से अपना उल्लू सीधा करने में लगे हुए हैं और मूर्ख एवं भोले लोग, जिनके लिए महर्षि दयानन्द ने 'आँख के अन्धे गांठ के पूरे' विशेषण प्रयुक्त किया है, उनके जाल में इस प्रकार से फंसते जाते हैं कि उनका निकलना मुश्किल ही नहीं असम्भव सा हो गया है। कोई गुरुमन्त्र देकर उनका कल्याण करने की घोषणा करता है, कोई बीज मन्त्र देकर, कोई केवल प्याज, समोसा या टमाटर खिला कर ही लोगों का भाग्य परिवर्तन करने का दम्भ भर रहा है। कोई चिकने चुपड़े शब्दों द्वारा, कोई तथाकथित भक्ति में लीन होकर नाचने गाने के द्वारा, कोई चेलियों के संग रास रचा कर और कोई गुरुघर की सेवा में ही सब कुछ प्राप्त करने की बात करके लोगों का सर्वस्व-हरण इस प्रेम से कर रहे हैं कि

अनपढ़ अशिक्षितों की बात तो जाने दें, आज पठित वर्ग में, जिन्हें हम बुद्धिजीवी कहते हैं, घोर पाखण्ड पग पसार चुका है। सस्ते साधनों द्वारा सुख प्राप्त करने की एक होड़ सी लग गई है। समय-२ पर इन पाखण्डियों के काले कारनामे जनता के सामने आते भी हैं परन्तु लोगों की आँखें नहीं खुलतीं, वे जागते नहीं हैं।

हरण करवाने वाले उसके विरुद्ध कुछ भी सुनना तक नहीं चाहते। इससे किसी और का भले ही कोई कल्याण हो या न हो इन तथाकथित गुरुओं एवं बाबाओं की तो चांदी ही चांदी हो रही है। यह कितनी बड़ी विडम्बना है कि अन्धश्रद्धा के वशीभूत होकर अनेक लोग दिन प्रतिदिन अपने समय और धन को लुटा कर इन धूर्तों के जाल में फंसते जाते हैं और जिनके पीछे कल सैंकड़ों लोगों की भीड़ थी आज लाखों की हो चुकी है। अज्ञान की पराकाष्ठा भला और क्या हो सकती है! कहाँ पूर्ण बुद्धिपूर्वक परिश्रम द्वारा, जीवन में ऊपर उठने की बात और कहाँ केवल आँखें बन्द करके तथाकथित गुरुओं, बाबाओं एवं बापूओं के पीछे भेड़ की भाँति चलने की यह प्रथा? क्या राष्ट्र का इससे कोई भला होने वालना है? कदापि नहीं। उत्थान तो इससे क्या होना है? उल्टा पतन, नहीं-२, घोर पतन हो रहा है। अनपढ़ अशिक्षितों की बात तो जाने दें, आज पठित वर्ग में, जिन्हें हम बुद्धिजीवी कहते हैं, घोर पाखण्ड पग पसार चुका है। सस्ते साधनों द्वारा सुख प्राप्त करने की एक होड़ सी लग गई है। समय-२ पर इन पाखण्डियों के काले कारनामे जनता के सामने आते भी हैं परन्तु लोगों की आँखें नहीं खुलतीं, वे जागते नहीं है। कितना घोर आश्चर्य है। ऐसे अन्धकारपूर्ण समय में क्या हम आर्यों का यह पावन एवं प्रथम कर्त्तव्य नहीं है कि पूरी शक्ति के साथ, योजनाबद्ध ढंग से, एकजुट होकर पाखण्ड को मिटाने के लिए आगे आयें और समाज में जागृति का शंखनाद करें।

देखो! समय चाहे कोई भी हो, प्राचीन हो या नवीन, विज्ञान का युग हो या कोई और, श्रेष्ठ सच्चे ब्राह्मण की आवश्यकता तो सदैव रहेगी। वास्तव में तो यही लोग हैं जो राष्ट्र को सुरक्षित, सुखी एवं समृद्ध किया करते हैं। अपने श्रेष्ठ उपदेशों द्वारा लोगों को सन्मार्ग पर प्रेरित किया करते हैं। राष्ट्र की अन्य शक्तियाँ या अन्य वर्ग तो सब इनकी प्रेरणा पाकर आगे बढ़ते हैं। क्षत्रिय की क्षात्र-शक्ति पर यदि ब्रह्म-शक्ति का अंकुश न हो तो वह भी राष्ट्र की रक्षा करने के स्थान पर राष्ट्र की विध्वंसक हो जाये। वैश्य के धन पर यदि ब्राह्मण के उपदेश का मार्गदर्शन न हो तो वह भी संग्रह की प्रवृत्ति वाला होकर केवल अपना हित ही देखने वाला हो जाये। शूद्र में भी सेवा भाव का आधान ब्राह्मण द्वारा ही किया जा सकता है। इससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि ब्राह्मण वर्ग को कैसा होना चाहिए।

एक बात और स्पष्ट कर दें कि कोई हमारे इन वर्णों के वर्णन को पढ़कर आज के समाज में प्रचलित इस तथाकथित जाति पाँति के द्वारा इन वर्णों का निर्णय न करे। हमारा अभिप्राय सभ्य वैदिक समाज में प्रचलित उस व्यवस्था से है जो जन्मगत न होकर कर्मों के आधार पर चलती थी और बहुधा जिसका निर्णय आचार्य के कुल में हुआ करता था। कही विषयान्तर न हो अतः हम पुनः अपने अभीष्ट विषय पर आते हुए कहते हैं कि पुरोहित द्वारा राष्ट्र को जगाने के साधन क्या हैं? वह किस आधार पर इतनी बड़ी घोषणा कर रहा है कि मैं राष्ट्र को जगाने के लिए बैठा हूँ। वह जगायेगा कैसे? इसका वर्णन अथर्ववेद (१९/४१/१) के निम्नलिखित मन्त्र में आता है-

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसंनमन्तु।।

अर्थात् आत्मसुख प्राप्त किए हुए ऋषियों ने लोक कल्याण की इच्छा करते हुए तप का अनुष्ठान किया और दीक्षा का धारण किया। उस तप और दीक्षा से राष्ट्र उत्पन्न हुआ, इसलिए इस राष्ट्र के सामने देव भी ठीक प्रकार से झुकें, सत्कार करें।

भाव यह है कि राष्ट्र को जन्म तो ऋषि लोग ही देते हैं, किसलिए देते हैं? सर्वसुखों की सिद्धि के लिए। तप में सिद्धि प्राप्त करके वे दीक्षित हुए और राष्ट्र को जन्म दिया।

अर्थात् राष्ट्र के लिए वे नियम, वे व्यवस्थायें दीं कि सर्व सुखों की सिद्धि जन-२ के लिए सहज ही हो सके। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि जब अतपस्वी लोग और बिना दीक्षित हुए लोग नियम और व्यवस्था बनाने वाले होंगे तो सुखों के स्थान पर दु:खों का बढ़ना निश्चित है। इसलिए दीक्षित हुए लोगों को राष्ट्र के लिए अर्पित करने हेतु ऋषियों ने जिस शिक्षा पद्धति को पूर्ण परीक्षा के उपरान्त लागू किया वह थी गुरु-शिष्य परम्परा की गुरुकुलीय प्रणाली जहाँ पर वे दोनों तप करते थे। दोनों कौन? गुरु एवं शिष्य। आचार्य ही शिष्य को तपा कर उसे दीक्षा धारण करवाता था। उसे राष्ट्र को अर्पित करता था। कहना चाहिए कि राष्ट्र को जन्म देता था। आचार्य की उस कृति पर मोहित होकर देव लोग भी सम्मान से झुक कर उसे नमन करते थे। वह दीक्षित विद्याव्रत स्नातक राष्ट्र की वेदी में एक इष्टिका बन कर लगता था और समाज को आगे ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता था। कैसा दिव्य युग था वह! ऐसे आचार्य को यदि राष्ट्र-वेदी का पुराहित न कहें तो और भला क्या कहें?

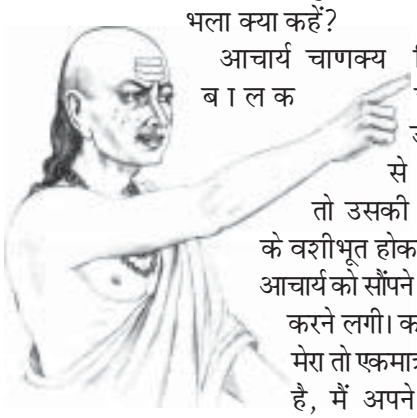

आचार्य चाणक्य जिस समय बालक चन्द्रगुप्त को उसकी माता से माँगने आये तो उसकी माता ममता के वशीभूत होकर बालक को आचार्य को सौंपने में आनाकानी करने लगी। कहने लगी कि मेरा तो एकमात्र यही सहारा है, मैं अपने बेटे को न दूंगी। आचार्य हँस कर कहने लगे कि सत्य है माता, बेटा तो यह तेरा ही है, परन्तु आज यह तेरा बेटा है कल पूरे राष्ट्र का होगा। पूरा राष्ट्र इसकी जय-जय कार करेगा। क्या तू चाहती है कि स्वार्थ में पड़कर तू इसे इसकी महान् पहचान से परे रखे? तू इसे मुझे दे, मैं इसे राष्ट्र को अर्पित करूँगा। इतिहास साक्षी है कि आचार्य ने चन्द्रगुप्त जो भेड़ बकरियाँ चराता था, को क्या से क्या बना दिया। मानो वेद की वह सूक्ति मूर्त रूप में आकर सामने खड़ी हो गई हो जिसे हमने इस लेख का शीर्षक बनाया है।

कौन जानता था कि मथुरा में ब्रह्मऋषि गुरु विरजानन्द के चरणों में बैठकर जो सन्यासी शिक्षा पा रहा है वह इस देश का एक दीपस्तम्भ बन जायेगा। गुरु ने शिष्य के अन्तर में स्थित वह विशाल ज्योति देख ली थी, वह क्रांति देख ली थी जो सदियों से जर्जरित इस देश का कायाकल्प करने की क्षमता रखती थी। वे जान गये थे कि यही सच्चा ब्राह्मण है, यही वास्तविक पुरोहित है। दण्डी गुरु विरजानन्द की कुटिया में यदि राष्ट्र जन्म नहीं ले रहा था तो और भला क्या हो रहा था? अथर्ववेद के उपर्युक्त मन्त्र में वर्णित तप के द्वारा दीक्षित बल और ओज के समक्ष क्या राष्ट्र सम्मान से नहीं झुका? उस पुरोहित की जागृति की भावना पर बार-बार बलिहारी।

भविष्य में जब भी राष्ट्र जागेगा, उसका भाग्योदय होगा तो ऐसे ही किसी पुराहित के पौरोहित्य में होगा। ऐसे ही किसी ब्राह्मण के ब्राह्मणत्व में होगा। भारत से बाहर दूसरे देशों में भी जब भी किसी राष्ट्र के अंगडाई ली है वह किसी न किसी ब्राह्मण की शरण में ही ली है। उस देश में उसका नाम भले ही ब्राह्मण या पुरोहित न हो, उससे कोई विशेष अन्तर नहीं आता परन्तु कार्य उसने वही किया जो वेद की उपर्युक्त सूक्ति या मन्त्र की मूल भावना है। ईश्वरीय नियम तो भारत क्या और पाकिस्तान क्या, ईरान क्या और जर्मनी क्या, अमेरिका क्या और आस्ट्रेलिया क्या, सर्वत्र एक जैसे ही हैं। इसलिए वेद के उपदेश किसी एक स्थान, समाज या व्यक्ति के लिए न होकर पूरे भूमण्डल के लिए हैं। 'यत्र विश्वं भवत्येक नीडम्' जहाँ सारा संसार एक नीड अर्थात् घोंसला बन जाये, वह क्षमता यदि किसी विचार में हो सकती है तो वे वेदमन्त्र ही हो सकते हैं।

हमारे भारतवर्ष का इतिहास ऐसे अनेक सच्चे ब्राह्मणों से भरा पड़ा है जो राष्ट्र-हित में अपना सर्वस्व लगा गये। आचार्य चाणक्य और महर्षि दयानन्द के उदाहरण तो संकेत मात्र हैं। परन्तु-- जब से हम वर्ण व्यवस्था जन्म के आधार पर मानने लगे, परार्थ का स्थान स्वार्थ ने लिया और धर्म बाह्य आडम्बर बन गया, देश में सच्चे उपदेशकों की, सच्चे ब्राह्मणों की, सच्चे पुरोहितों की कमी हो गई तो हमारा विनाश भी हो गया। प्राचीन आर्यावर्त्त के राजा कभी भी निरंकुश नहीं होते थे। उनको अनुशासित रखने के लिए एक सभा होती थी जिसके अधिकारी उच्च कोटि के विद्वान ब्राह्मण एवं पुरोहित लोग हुआ करते थे। अपने श्रेष्ठ उपदेशों द्वारा ये लोग सदैव राजा को सत्परामर्श दिया करते थे जिससे कि राजकार्य अति उत्तमता के साथ चलता रहता था। आओ हम राष्ट्र-यज्ञ में समिधा बन कर लगें और अज्ञान तथा अंधकार, पाखण्ड आदि को मिटाने के लिए श्रेष्ठ विद्वानों की चरण शरण में बैठ कर उनके दिये उपदेश द्वारा तन मन धन से राष्ट्र निर्माण में जुट जायें कि जिससे यह राष्ट्र पुन: विश्व का गुरु बन सके।

(लेखक आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल प्रदेश के महामंत्री हैं।)

आस्था और अन्धविश्वास

❑मनमोहन कुमार आर्य, पताः १९६ चुक्खूवाला-२ देहरादून-२४८००१ फोनः ०९४१२९८५१२१

आस्था का अर्थ है कि हम जिस बात को मानते व करते हैं उसका हमें पूरा ज्ञान है। उसे हम तर्क, प्रमाण, युक्ति एवं बड़े-बड़े विद्वानों के वाक्यों व कथनों से पुष्ट व सिद्ध कर सकते हैं, लेकिन आजकल आस्था शब्द का प्रयोग इसके वास्तविक अर्थों में न करके स्वार्थ सिद्धि और अपनी कमियों व अज्ञान को छुपाने में किया जा रहा है। आस्था के विरुद्ध यदि कोई वाद-विवाद होता है तो हम विषय से भागते नहीं, हटते नहीं, ऊल-जलूल दलीलें नहीं देते, अपितु विरोधी तर्कों व आरोपों का इस प्रकार से उत्तर देते हैं जैसे कक्षा में विद्यार्थी के प्रश्नों का उत्तर गुरुजी या अध्यापक देते हैं। ऐसे ही प्रश्नों को उपस्थित कर प्रश्नोपनिषद् के ऋषि ने व सत्यार्थप्रकाश में महर्षि दयानन्द ने समाधान किये हैं, इन्होंने आस्था के नाम पर प्रश्नों को टाला नहीं, अपितु उनके सयुक्तिक उत्तर दिए हैं।

ईश्वर की यदि हम चर्चा करें तो यह सिद्ध होता है कि इस संसार को बनाने, चलाने व अन्त में इसका विनाश व प्रलय करने वाला ईश्वर है। सृष्टि की रचना का कार्य अपौरुषेय सत्ता द्वारा ही सम्भव है। न तो यह सृष्टि स्वयं बन सकती है और न ही संसार के सब मनुष्य एक साथ मिलकर इस सम्पूर्ण सृष्टि को बना सकते हैं। सृष्टि को बनाने की तो बात ही क्या, इसके एक-एक अवयव अर्थात् जल, वायु या अग्नि वा ऐसे अन्य किसी व किन्हीं पदार्थों को ही नहीं बना सकते हैं। सूर्य, चन्द्र, पृथिवी व ब्रह्माण्ड में स्थित लोक-लोकान्तरों को बनाना तो संसार की सारी जन-संख्या के लिए भी असम्भव है। विचार करने पर यह भी ज्ञात होता है कि हमारा शरीर व इसकी सभी इन्द्रियाँ, यन्त्र व उपकरण भी उसी अपौरुषेय/ ईश्वर के द्वारा बनाये गये हैं। वह सत्ता सर्वव्यापक, निराकार, अदृश्य व अति सूक्ष्म, सत्य, चेतन, आनन्द से परिपूर्ण, सर्वज्ञ आदि स्वाभाविक गुणों से युक्त व पूर्ण होनी सिद्ध होती है। ऐसा ही ईश्वर का स्वरूप चार वेदों, उपनिषद्, दर्शन ग्रन्थों व मनुस्मृति आदि में वर्णित है।

अब ईश्वर की उपासना व पूजा की बात आती है। प्राचीन परम्परा के अनुसार उसकी उपासना योग विधि से एक आसन में स्थित होकर आत्मा व मन को उसमें लगा देने, उसके गुणों का ध्यान करने व गायत्री आदि मन्त्र का अर्थ-पूर्वक चिन्तन व विचार करके की जाती है या की जा सकती है। अन्य कोई प्रकार उसका नहीं है। परन्तु आजकल हम क्या देखते हैं कि अज्ञानी व स्वार्थी लोगों ने उपसना के स्वरूप को ही विकृत कर दिया है। मध्यकाल में अनार्ष ग्रंथों की रचना करके उपासना के स्थान पर मूर्तिपूजा का प्रचलन किया गया। अविद्या के कारण लोग शीघ्र ही अन्धविश्वासों का शिकार हो जाते हैं या उसमें फंस जाते हैं। पहले तो राम, कृष्ण, विष्णु व शिव आदि कुछ इने-गिने महापुरुषों की ही पूजा- मूर्तिपूजा के द्वारा की जाती थी। परन्तु हम देखते हैं कि समय के साथ-साथ भगवानों व इष्टदेवों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। ईश्वरोपासना से जो लाभ होते हैं क्या वे मूर्तिपूजा से होते हैं? इस पर कोई विचार ही नहीं करता!

यदि ईश्वर के स्थान पर किसी जड़ वस्तु की पूजा करने वाले यह कहें कि हमने सन्तान मांगी थी और मन्नत मांगने से हमारी वह मन्नत पूरी हो गई, तो प्रश्न है कि कुत्ते, बिल्ली, गाय, भैंस, जंगली जानवरों, सांप, बिच्छू आदि सभी की सन्तानें हो रही हैं, तो क्या ये जड़पूजा करते हैं? इसका उत्तर जड़ पूजा करने वालों के पास नहीं है? यही हाल अन्य मन्नतों की पूर्ति का भी है। किसी विशेष स्थान या व्यक्ति से जो मन्नतें एक मत वालों की पूरी होती हैं, वही मन्नतें दूसरे मत वालों की भी पूरी होती हैं जो उन देवी देवताओं, पीर पैगम्बरों आदि को मानते ही नहीं हैं। इससे सिद्ध हो जाता है कि जड़पूजा के बारे में जो दलीलें दी जाती हैं, वे सब गलत हैं। ईश्वर के स्थान पर किसी औश्र की पूजा को आस्था का नाम देना बुद्धि का दिवाला निकालने के समान है। आस्था सच्चे सर्वव्यापक परमेश्वर की वेदों व वेदसम्मत शास्त्रों के अनुसार धारणा व ध्यान द्वारा उपासना व पूजा करने को कहते हैं जिससे ईश्वर की सहायता प्राप्त होती है, ईश्वर व आत्मा का साक्षात्कार प्राप्त होता है। इस सच्ची उपासना में मनुष्य अपना जो समय व्यतीत करता है उसका फल क्रियमाण कर्म, संचित कर्म, प्रारब्ध व इनसे मिलने वाले सुख व शान्ति के रूप में प्राप्त होता है। इस प्रकार निरन्तर उन्नति करता हुआ आत्मा मोक्ष

का अधिकारी होता है। इस विचार व चिन्तन से यह ज्ञात हुआ कि अज्ञानता पूर्वक किये जाने वाले किसी भी कार्य को आस्था का नाम देना गलत व अविवेकपूर्ण कार्य है, इससे उद्देश्यों व इच्छाओं की पूर्ति व सिद्धि नहीं होती है।

आईये, अब थोड़ी चर्चा अन्धविश्वासों की भी कर लेते हैं। अन्धविश्वासों के सन्दर्भ में हमें लगता है कि महर्षि दयानन्द के आविर्भाव तक किसी को पता ही नहीं था कि अन्धविश्वास नाम का भी कोई शब्द होता है। सभी सही व गलत कार्यों को जो धार्मिक दृष्टि से किये जाते थे वे धर्म, मत या धार्मिक परम्पराओं जैसे नामों से जाने जाते थे। महर्षि दयानन्द ने सभी वेद विरुद्ध व अवैदिक कार्यों, परम्पराओं, ईश्वरोपासना के नाम पर किसी और की पूजा व यज्ञों में पशुओं के मांस की आहुति, सतीप्रथा, फलित ज्योतिष, बेमेल विवाह, अवतारवाद व उनकी मूर्ति व अन्य सभी प्रकार से पूजा व उपासना आदि को अन्ध-विश्वास की संज्ञा दी। जिस प्रकार से विद्या व अविद्या, ज्ञान व अज्ञान शब्द हैं उसी प्रकार से विश्वास व अन्ध-विश्वास शब्द भी हैं। इसी प्रकार आस्था व अनास्था दो शब्द हैं।

आस्था शब्द ज्ञान, विद्या, श्रद्धा व विश्वास के लिए प्रयोग में लाया जाता है और अनास्था-अन्धविश्वास, अज्ञान, अश्रद्धा व अविद्या के लिए। ईश्वर निराकार व सर्वव्यापक है, इसमें उपासक व भक्त की आस्था होना, सच्ची आस्था है। इसके विपरीत मूर्ति, किसी नदी, किसी विशेष स्थान, किसी जीवित या मृत मनुष्य आदि में पूज्य व उपासना बुद्धि अन्धश्रद्धा, अन्धविश्वास व अन्धी-आस्था कही जायेगी।

वेदों के आधार पर महर्षि दयानन्द ने संसार की सर्वाङ्गीण उन्नति व कल्याण का एक सर्वोत्तम सिद्धान्त दिया है कि अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि करनी चाहिये। इसे आस्था के सन्दर्भ में कहें तो अनास्था, अन्धी-आस्था, अन्धविश्वासों का नाश करना चाहिये और सच्ची आस्था, सच्चे विश्वास, सच्ची श्रद्धा, सच्ची भक्ति व सच्ची उपासना की वृद्धि करनी चाहिये। हम समझते हैं कि इस सिद्धान्त से सारा देश व समाज अनभिज्ञ ही है।

अज्ञान के संस्कार, अन्ध परम्पराओं का अभ्यास आदि से उत्पन्न मूढ़ता के कारण लोग सकारात्मक, उत्तम व सत्य मान्यताओं के बारे में सोच ही नहीं पाते हैं। अज्ञान के संस्कारों को तो सच्चा गुरु ही दूर कर सकता है जिनका हमारे समाज व देश में अभाव दिखाई देता है। आज धर्म व व्यवसाय दोनों एक दूसरे के पूरक व पर्याय बन कर काम कर रहें हैं। सबको केवल अपनी आर्थिक उन्नति की चिन्ता है। धर्म-कर्म, सेवा, परोपकार आदि का स्थान प्राथमिक न होकर बहुत बाद में आता है; अतः अन्धविश्वास को दूर करना कठिन व कठिनतम है। महर्षि दयानन्द ने अपने गुरु प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द जी के कहने पर व अपने विवेक व उत्कृष्ट ज्ञान के कारण यह कार्य किया। उनको मात्र १० वर्ष का अल्प समय ही मिला जिसमें उन्होंने अभूतपूर्व कार्य किया। उन्होंने अपने विचारों से अपने समय में सारे संसार में आध्यात्मिक क्रान्ति की। कोई भी मत, पन्थ, मजहब, सम्प्रदाय उनकी आध्यात्मिक वैचारिक क्रान्ति से बचा नहीं, सब पर उसका कुछ कम या अधिक सकारात्मक प्रभाव हुआ। हमारे भाई जो पहले विदेश की यात्रा में पाप मानते थे तथा विदेश गये व्यक्ति को धर्म से च्युत कर देते थे, विधर्मी के हाथ का भोजन करने व जल पीने पर भी जिनका धर्म छूट जाता था, विधवा विवाह के विरोधी थे, एक ही जाति व समुदाय में विवाह के पक्षधर थे, आज सबने अपने इन विषयों में महर्षि दयानन्द के विचारों को स्वीकार कर लिया है। परन्तु बहुत से लोगों की अन्धविश्वासों से जीविका चलती है और प्रचुर कमाई होती है, अतः वह आज भी यथावत् जारी है। यह स्थिति सभी मत-मतान्तरों में है। बहुत से वैज्ञानिक तो इसी कारण से ईश्वर तक के अस्तित्व को अस्वीकार कर चुके हैं। उन्हें ईश्वर के स्वरूप व उपासना तथा वैदिक सिद्धान्तों को बताने वाला कोई है ही नहीं और न इस कार्य के लिए उनके पास समय है। ईश्वर व जीवात्मा के स्वरूप के बारे में जिज्ञासा करने व दुःखों से मुक्ति के उपायों पर विचार करने तक का समय भी उनके पास नहीं है। उनका सारा समय तो वैज्ञानिक कार्यों, खोजों या फिर जीवन को सुविधापूर्वक व्यतीत करने में ही व्यतीत होता है। ऐसा ही सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है।

जब तक देश व समाज में अन्ध-विश्वास हैं, देश पूरी तरह से उन्नति नहीं कर सकता। सर्वाङ्गीण उन्नति तभी कही जा सकती है कि जब अज्ञान, अन्धविश्वासों व झूठी आस्था, जिसे वर्तमान में आस्था का नाम दिया जा रहा है, का समूल अन्त हो। इसके लिए बच्चों व बड़ों को सोकर उठने व सोते समय इस वेद-भावना का पाठ करना चाहिये कि 'सत्य को ग्रहण करने व असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये, सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य व असत्य को विचार करके करने चाहियें। अविद्या, अज्ञान, अन्धविश्वास, झूठी आस्था, अन्धी श्रद्धा का नाश करना चाहिये और विद्या, ज्ञान, सच्चे विश्वासों, सच्ची आस्था, व सच्ची श्रद्धा में वृद्धि करनी चाहिये।' हमें यह भी अनुभव होता है कि सच्चे धर्मग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व आर्याभिविनय सहित वेद, उपनिषद्, दर्शन, विशुद्ध मनुस्मृति आदि ही हैं। इन्हीं से झूठी आस्था व अन्धविश्वास समाप्त होंगे।

राष्ट्र-चिन्तन

शिक्षा : क्या करना था क्या कर दिया!

❑राजेशार्य आट्टा, 1166, कच्चा किला, साढौरा, यमुनानगर-१३३२०४

भारत को पराधीन रखने के लिए अंग्रेजों ने जिस शिक्षा प्रणाली को अपनाया था, दुर्भाग्य से स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी देश के शीर्ष पदों पर बैठे नेता उसी का समर्थन, पोषण और द्रुतगति से संवर्धन करते रहे। शायद हम गुलामी के अभ्यस्त हो चुके थे। राष्ट्रवादी नेता, लेखक, शिक्षा शास्त्री आदि घोर उपेक्षा के शिकार हो गये।

प्रबुद्ध पाठक! शिक्षा (विद्यालय स्तर पर और धर्मगुरुओं द्वारा प्रचारित) समाज में परिवर्तन (अच्छा या बुरा) लाने में बड़ी भूमिका निभाती है। शिक्षा के अभाव के कारण ही प्राचीन आर्यों के पवित्र अध्वर (हिंसा रहित) यज्ञ में बलि की कुप्रथा चली, जिसके विरोध में चार्वाक, बौद्ध, जैन आदि नास्तिक मतों का प्रचार हुआ। बौद्ध मत की शिक्षा के प्रभाव से देश के सैनिक भी अहिंसाव्रती हो गये। दूसरी ओर अद्वैतवाद की शिक्षा 'संसार सपने के समान झूठा है' ने हिन्दू समाज को जीवन के प्रति उदासीन कर दिया। पुराणों की शिक्षा के प्रभाव से अवतारों व मंदिरों की महिमा बढ़ी व भक्ति का स्वरूप बदल गया। ये सब भारत को पराधीन बनाने में सहायक हुए। भारत में इस्लाम के आगमन से हिन्दू समाज अपनी पवित्रता बचाने के लिए 'कछुआधर्मी' बन गया, जिसके परिणामस्वरूप बाल विवाह, सती प्रथा व जातिप्रथा ने हिन्दू समाज पर भयंकर रूप से दुधारा चलाया। दूसरी ओर इस्लाम अपनी मजहबी शिक्षाओं पर दृढ़ रहकर अपना काम करता रहा। सैकड़ों वर्ष तक साथ रहकर भी दोनों धाराएं अलग-अलग चलती रहीं।

अंग्रेजों के आगमन से भारत में कई विषय नये ज्ञात हुए और कई भ्रान्त धारणाएँ (आर्य विदेशी, आक्रमणकारी व असभ्य थे; वेद गडरियों के गीत हैं; रामायण-महाभारत आदि काल्पनिक ग्रंथ हैं; आर्यों का इतिहास लगभग तीन हजार वर्ष पुराना है आदि) प्रचलित हुईं। अंग्रेजी शिक्षा के कारण भारतीय युवकों में अंग्रेजी भाषा-भूषा, खानपान व रहन-सहन के प्रति आकर्षण बढ़ा। स्वतंत्रता के बाद तो हम इतने स्वच्छन्द हो गये कि हमने खान-पान, शादी-विवाह, रहन-सहन आदि की सभी मर्यादाएँ तोड़ दीं।

'अहिंसा परमोधर्मः' वाले देश में विद्यार्थियों को अण्डे, मांस में विटामिन, प्रोटीन होना पढ़ाया जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप खेती की जगह मुर्गी फार्म, सुअर फार्म, मछली फार्म आदि उगने लगे हैं। कहने को तो हम धार्मिक (राम, कृष्ण, हनुमान, शंकर, देवी आदि के) भक्त हैं; बुद्ध-महावीर के शिष्य हैं, श्री गुरुग्रंथ साहब के आगे सिर झुकाने वाले हैं; नये-नये गुरुओं के भक्त हैं, पर चील-कव्वों व कुत्तों का भोजन (अण्डे, मांस आदि) भी हमने नहीं छोड़ा। गाय को माता मानने वाला भारत सन् २०१३ ई० में २१ लाख टन (गाय-भैंस का) मांस निर्यात कर विश्व में प्रथम स्थान पर पहुँच गया। जिस आहार को खाने वाले कभी राक्षस कहलाते थे; जिसे खाने वालों को गाँवों या नगरों से दूर जंगल में रहना पड़ता था; वही आहार शिक्षा (पाठ्यक्रम, टेलीविजन, समाचार पत्र आदि) के द्वारा भारत के घर-घर में पहुँचा दिया गया। लाश को अपवित्र कहकर उससे बचकर चलने वाला इन्सान आज अपने पेट को लाशों से भरकर घूम रहा है। यदि कल कोई डाक्टर आदमी के मल (टट्टी) में विटामिन (क्योंकि उसे खाकर सुअर मोटा ताजा हो जाता है) बता दें, तो शायद वह भी नहीं बच पाएगा। क्या यह सत्य नहीं है कि इस तामसिक आहार के कारण ही देश में हिंसा, बलात्कार, चोरी, डकैती, मारधाड़ आदि अपराध बढ़े हैं और बर्ड फ्लू, स्वाइन फ्लू आदि नई-नई बीमारियां आई हैं?

इस अन्धी शिक्षा ने डाक्टर, इंजीनियर, वकील, नेता, अभिनेता, खिलाड़ी तो बना दिये; पर आत्मा, परमात्मा, कर्मफल व्यवस्था व पुनर्जन्म आदि को जीवन से निकालकर मानव को केवल भौतिक पुतला बना दिया और इसके जीवन का उद्देश्य बन गया-(सब कुछ) खाओ-पीओ और मौज करो।

धर्म के नाम पर देश का बँटवारा हुआ, अतः जनसंख्या की अदला-बदली हो जानी चाहिए थी, पर इसे राष्ट्रीय नेताओं की उदारता कहें, अदूरदर्शिता कहें या वोटों की भूख कि पाकिस्तान जाने के इच्छुक लोगों को रोक लिया गया। उन्हें अल्पसंख्यक कहकर संविधान की धारा ३० के अन्तर्गत अपने शिक्षा केन्द्र (मदरसे) खोलने की पूरी छूट दी गई। धर्मनिरपेक्ष सरकार की तरफ से मदरसों के लिए अनुदान दिया गया। अर्थात् जो शिक्षा और भाषा पाकिस्तान

बनाने में कारण थी, उसी को बढ़ावा दिया गया। यदि राजनीति और धर्मगुरुओं ने हमें नहीं बाँटा होता, तो बँटवारे के बाद भी हिन्दू मुस्लिम आपस में घुल-मिल गये होते। पर मुस्लिमों की अलग पहचान बनाए रखने के लिए स्वार्थी राजनेता और धर्मगुरू उन्हें चौदहवीं शताब्दी में ही देखना चाहते हैं। क्या ही अच्छा होता यदि पूरे देश में एक जैसा पाठ्यक्रम लागू होता। अपने पूजा-घरों से निकलने के बाद हम केवल भारतीय बन जाते। राष्ट्र-हित में बाधक बनने वाली मंदिर-मस्जिद गुरुद्वारे की दीवार को हटा दिया जाता।

शिक्षा ने आदि मानव को मूर्ख असभ्य व मांसाहारी कहा, तो हमने मान लिया, हमलावर सिकन्दर व अकबर को महान कहा, तो हमने मान लिया; शाहजहाँ को ताजमहल का निर्माता और औरंगजेब को जिन्दा पीर कहा, तो हमने मान लिया, एकमात्र गाँधी जी को स्वतंत्रता संग्राम का विजेता कहा, तो हम झूमकर गाने लगे-

दे दी हमें आजादी बिना खड्ग बिना ढाल।
साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल।।

वर्षों से पढ़ने-सुनने के कारण जिस (असत्य या असम्भव) बात को हृदय स्वीकार लेता है, फिर उसके विषय में मस्तिष्क अपने तर्क-वितर्क के दरवाजे बंद कर लेता हे। यदि कोई विद्वान् उन्हें खोलना भी चाहे, तो हम उसे अपना शत्रु मानकर उसका अहित करते हैं। इसलिए भारतीय इतिहास पुनर्लेखन संस्थान के अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तम दास नागेश ओक को 'वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास' (भाग-१) में लिखना पड़ा-

'पाठकों से यह अनुरोध है कि वे निर्भय और खुले मन से इतिहास का समीक्षण करना सीखें। रूढ़ धारणाओं के गढ्ढों में न फँसे रहें। कुछ नये तथ्य सीखने के लिए मन में स्थान अड़ाए बैठे पुराने तथ्यों को निकाल फैंकना पड़ता है। कोई १५० वर्ष पूर्व ऐसा साहस स्वामी दयानन्द सरस्वती ने उनकी अपनी युवावस्था में दिखाया था। एक नेत्रहीन कृषकाय ऋषि विरजानन्द से वेदविद्या सीखने की इच्छा दयानन्द ने प्रकट की। गुरु विरजानन्द ने एक शर्त रखी कि वेदविद्या सीखने से पूर्व वर्तमान व्यवहारी धर्म विद्या के ग्रंथों को नदी में डुबो देना होगा। शिष्य दयानन्द ने वही किया और विरजानन्द वे वेद विद्या सीखी। इससे वे बड़े ज्ञानी, समर्थ, सिद्ध और आर्य समाज के संस्थापक बने। अतः युवा दयानन्द के सदृश जिसमें व्यवहारी (केवल पैसा कमाने वाला) ज्ञान फैंक देने का साहस होगा, वही सत्य ज्ञान ग्रहण कर पाएगा।' (पृष्ठ ४६-४८)

भारत को पराधीन रखने के लिए अंग्रेजों ने जिस शिक्षा प्रणाली को अपनाया था, दुर्भाग्य से स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी देश के शीर्ष पदों पर बैठे नेता उसी का समर्थन, पोषण और द्रुतगति से संवर्धन करते रहे। शायद हम गुलामी के अभ्यस्त हो चुके थे। राष्ट्रवादी नेता, लेखक, शिक्षा शास्त्री आदि घोर उपेक्षा के शिकार हो गये। आहार, आचार, विचार, रहन, सहन, परम्परा, सभ्यता आदि की दृष्टि से भारत की पहचान खत्म हो रही है। वैचारिक प्रदूषण (समलैंगिकता, लीव इन रिलेशनशिप आदि) को उदारवादी (खुलापन) सोच की संज्ञा दी जा रही है। स्वस्थ समाज व शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण करने के लिए आशा लगाई जा रही है पर सब कुछ सरकार के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। क्योंकि-

हादसों पर हादसे हैं, सावधानी क्या करें,
इस भयंकर आग में, दो चुल्लू पानी क्या करें,
जनता की भी तो कोई जिम्मेवारी होती होगी,
आप ही बताएं अकेली राजधानी क्या करें।

शायद 'मैं'

□सूबेदार धर्म सिंह

कालचक्र के चलते भी,
मेरे मनो मस्तिष्क में घर करके,
काम, क्रोध, लोभ और मोह ही सदा,
मेरी सात्विक आंकाक्षाओं को,
झिंझोड़ते रहे,
क्षण-प्रतिक्षण! पल प्रतिपल!
और मैं निहारता रहा,
उस निरीह वानरी की तरह,
जो निज सुत के शव को उठाए,
भटकती रहती है दर ब दर।
थक गया मैं बांध-बांध कर,
सेतु अपनी भीष्म प्रतिज्ञाओं के,
लेकिन, सदा सर्वदा हरयुग में
छुप-छुप कर चुराता रहा हूँ
अपने अमन शांति और सुख सुविधाओं को।
यद्यपि नहीं जान पाया कभी
जय-पराजय, सुर और असुर को, लेकिन
मौन अपनी प्रतिष्ठा के नाम पर
कौन, किसे, कब?
धकेलता है आतंक की ओर
है अनुतरित प्रश्न--
शायद 'मैं'।

गांव मोहम्मदपुर माजरा झज्जर-१२४१३३

गृहिणियों का आर्थिक योगदान

❑डॉ० मदन मोहन वर्मा, एस० बी० ९७, शास्त्री नगर गाजियाबाद-२०१००२

ये गृहिणियाँ ही हैं जो भारत को ही नहीं समूचे संसार को शक्ति प्रदान करती हैं, अपने समय, श्रम एवं व्यक्तित्त्व को घर के लिए पूर्णतः समर्पित करके, बिना किसी भी प्रकार की अपेक्षा किये हुए। फिर भी प्रसन्न वदना जीवन को जीते रहना, औरों को जीने देना लक्ष्य होता है इनका। तब इनके योगदान की अनदेखी क्यों?

गृहिणियों के घर में किये गये श्रम एवं उसके फलस्वरूप उनके घर के साथ-साथ समाज एवं राष्ट्र के आर्थिक जीवन को कंटक-विहीन करने की जो महत्वपूर्ण भूमिका है, उसकी पहचान और गणना एवं उसे आर्थिक-रूप देने की बात को अब अधिक दिनों तक न झुठलाया जा सकता है और न टाला जा सकता है। यह अर्थ-जगत् के प्रति तो न्यायसंगत होगा ही नहीं, साथ ही उनके इस योगदान के प्रति उदासीनता भी अब कल्याणकारी नहीं हो सकती।

नारी सशक्तिकरण के नाम पर राजनीतिक ढांचे में उन्हें समाहित करने और उनके स्वतंत्र जीवन-यापन की बात करना बेमायने हो जाती है, जबकि अर्थशास्त्र उनके घरेलू श्रम को किसी भी गिनती में रखने के लिए तैयार ही नहीं है।

हमारे पश्चिमी अर्थशास्त्रियों में मार्शल से लेकर पीगू, कीन्स, राबिन्सन आदि-आदि सभी ने एक ही स्वर में यह कहा है कि सकल घरेलू उत्पाद (जी०डी०पी०) में केवल उन्हीं आर्थिक क्रियाओं को सम्मिलित किया जा सकेगा जिससे अर्थ की प्राप्ति होती है और वही आर्थिक क्रिया में सम्मिलित है। इस सन्दर्भ में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा २००९ में श्रीमती सरला वर्मा के वाद में पुरुष अर्जक की आय एक हजार रूपये आंकी गयी थी, वह भी प्रतिदिन की अर्थात् पूरे माह की ३०,००० रुपये। जब ऐसी गणना इस वाद में मान्य थी तो ऐसा ही कुछ हमारे अर्थशास्त्री क्यों नहीं सोच समझ सकते हैं एवं क्रियान्वयन में ला सकते हैं। गृहिणियाँ, जो गृह निर्मात्री होती हैं, पुरुष अर्जकों की शारीरिक, मानसिक एवं उनकी सक्षमता की दृष्टि से उनके साथ कदम से कदम मिलाकर चलती हैं। उनको धनार्जन हेतु सुघड़ता के साथ न केवल तैयार करती हैं, अपितु मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उन्हें तरोताजा एवं कुशल रखने में पूर्ण सहायक होती हैं।

यदि धनार्जन की दृष्टि से देखा जाय तो गृहिणियों के समय एवं श्रम की उपेक्षा आदि काल से होती रही है और आज तो लगभग सीमा ही पार कर गई है; विशेषतः अर्थ-नेताओं ने कभी भी इस ओर सकारात्मक रूचि नहीं दिखाई और अर्थशास्त्री-गण तो अर्थ के अतिरिक्त कुछ भी सोचना चाहता ही नहीं।

परन्तु अब हमारे गणमान्य अर्थशास्त्रियों को इस ओर अपना ध्यान केन्द्रित करना ही पड़ेगा। प्रमाणतः तथा प्रत्यक्षतः भी गृह निर्मात्रियाँ अपने अर्जकों हेतु जितना श्रम करती हैं, उसकी उपादेयता का आकलन अब करना होगा। धन अर्जक, विशेषतः पुरुष और साधारणतः नारी अर्जक भी अपने २४ घण्टों में आठ से दस घण्टे धनार्जन में लगाते हैं। परन्तु ये गृहिणियाँ, जिन्हें आज गृहनिर्माण कर्त्ता कहा जाता है, प्रातः छः बजे से रात्रि दस बजे तक अपना पूरा समय १५-१६ घण्टे लगाती हैं। अपने पुरुष अर्जक पति, श्वसुर, जेठ, देवर को पूरी तरह तैयार करके धनार्जन हेतु घर से विदा करती हैं, साथ ही बच्चों को तैयार करके विद्यालय के लिए प्रस्थान करती-कराती हैं। तत्पश्चात् रसोई, घर की साज-सज्जा, धरना-उठाना, संवारना आदि कार्यों को निपटाती हैं।

समय निकाल कर पति, बच्चे आदि के आने वाले कल की तैयारियाँ भी तीसरे प्रहर तक निपटाती हैं। अब आई शाम। फिर वही रसोई एवं सेवाकार्य तथा घर की देख-रेख करती हैं जो दस-ग्यारह बजे रात तक चलता है। वह भी बिना किसी अवकाश के। बिना किसी सहायता के रात-दिन गृह-निर्मात्री यह कार्य सहर्ष, बिना रुके निपटाती हैं। न कोई शिकवा, न कोई शिकायत। केवल अपना ध्यान, समय, लक्ष्य और श्रम गृहकार्य हेतु, बड़ा ही बेजोड़ सामजंस्य बैठाती हैं। गृह-कार्य द्वारा घर में सुख-शांति, सम्पन्नता एवं खुशहाली लाने हेतु सदैव तत्पर एवं भावनात्मक रूप से सशरीर जुड़े हुए, बिना चेहरे पर शिकन लाये हुए।

कल्पना कीजिए यदि गृहिणियाँ अपना सर्वस्व लुटाकर अपना पूरा व्यक्तित्व घर को बिना लाग-लपेट के समर्पित न करती तो समाज एवं राष्ट्र के उत्थान को किस प्रकार गति मिलती, सहारा मिलता और घर परिवार की समृद्धि को मूर्त रूप मिलता। ये गृहिणियाँ ही हैं जो भारत को ही नहीं समूचे संसार को शक्ति प्रदान करती हैं, अपने समय, श्रम एवं व्यक्तित्त्व को घर के लिए पूर्णतः समर्पित करके, बिना किसी भी प्रकार की अपेक्षा किये हुए। परन्तु उन्हें बदले में क्या मिल रहा है? कुछ भी नहीं। फिर भी प्रसन्न वदना जीवन को जीते रहना, औरों को जीने देना लक्ष्य होता है इनका। तब इनके योगदान की अनदेखी क्यों? क्या सचमुच इनका आर्थिक योगदान है ही नहीं? है, और वह भी वृहद्। वृहद् एवं उपयोगी तथा आर्थिक भी।

उपयोगिता को पूरे अर्थशास्त्र में महत्त्व ही महत्त्व दिया गया है। सारी अर्थशास्त्रीय गणनाएँ इसी उपयोगिता प्राप्ति के आधार पर की जाती हैं। तब गृह निर्मात्रियों की श्रम उपयोगिताओं को अर्थशास्त्रीय गणना से वंचित करने का उद्देश्य एवं कारण क्या है? संभवतः यह कि अर्थशास्त्री-गण श्रमदान का महत्व समझे ही नहीं। गृह-निर्मात्रियाँ अपना सर्वस्व-समय, श्रम, व्यक्तित्त्व, नाम, उपयोगिता यहाँ तक कि अपना शरीर, घर-परिवार को सौंप देती हैं-दान-स्वरूप, केवल इसलिये कि घर-परिवार सक्षम रहे, सम्पन्न रहे; अर्जक कुशल तथा योग्य बने रहें और घर-परिवार, समाज, राष्ट्र के लिए अपनी अर्जन शक्ति में निहित शक्ति भर धनार्जन करते रहें। परन्तु यह सब किसके बल पर? निश्चित रूप से गृहिणी, गृह-निर्मात्री के बल पर। फिर इनकी अर्थशास्त्रीय उपयोगिता तो हुई न?

अब रह गई बात गणना की। वह भी सीधी-सादी है- बिना किसी विरोध एवं विवाद के। स्पष्टतः इन गृहिणियों के बल पर अर्जक जितना प्रतिदिन, प्रतिवर्ष अर्जित करता है उसके कम से कम डेढ़ गुना तक गृहिणियों की उपयोगिता है। यदि अर्जक आठ-दस घण्टे में सौ रूपये प्रति घण्टा अर्जित करता है तो गृहिणियों की उपयोगिता डेढ़ सौ रुपये के बराबर हुई क्योंकि वह सोलह सत्रह घण्टे से कम समय या श्रम नहीं देती है अर्जक को। यदि इन घण्टों के श्रम को नजरन्दाज भी करें तो भी अर्जक के डेढ गुणा के बराबर तो इनकी उपयोगिता हुई न? अतः इस उपयोगिता का आकलन अर्जक के डेढ गुणा के बराबर माना जाना चाहिए और इसे राष्ट्र के सकल घरेलू उत्पाद में सम्मिलित भी करने का बीड़ा हमारे अर्थशास्त्रियों को उठाना चाहिए। माना इनके योगदान का मूल्यांकन संकेतात्मक (नोशनल) है, परन्तु है तो! जिसकी आज हमें अर्थशास्त्रीय उपयोगिता माननी ही होगी और जिसे किसी भी मूल्य पर अब समयानुकूल मान कर उपयोगिता की श्रेणी में न रखने की भूल से बचना पड़ेगा। इक्कीसवीं सदी का अर्थशास्त्र अब इसे अधिक दिनों तक झुठला नहीं पायेगा।

वेद कथा महिमा

रचयिता : **स्वर्गीय श्री बलदेव शास्त्री, न्यायतीर्थ,** महेवह जिला रुडकी वासी)

प्रस्तोत्री : कु० वैशाली सैनी, आर्य प्रचारिका

वेद-कथा जन-गण-मल हारी,
सत्य-सुमंगल-शिव-सुखकारी।
वेद सत्य शिव सुन्दर वाणी,
कहते ऋषि मुनि सब जन ज्ञानी।
वेद-कथा भव-रोग सुऔषधि,
वेद-कथा अविवेक-महौषधि
वेद-कथामृत मानव! तजके,
जीवन विफल न कर भव भजके।
काम-क्रोध-मद-लोभ-विनाशी,
वेद-कथामृत दुख-विष-नाशी।
वेद-कथा वर-गुणगण-भरिता,
अमृत रसों से ज्यों सुर-सरिता।

२ श्रवण करो नित ध्यान लगा के,
कुटिल भाव सब दूर भगा के।
विविध काव्य बहु कविवर गाए,
कौन वेद-समता को पाए।
वेद ईश की पावन रचना,
उससे पृथक् ज्ञान से बचना।
विविध भाँति शुभ विद्या नाना,
निखिल-ज्ञान-विज्ञान-प्रधाना।

३ लोक-नीति नृत-नीति सभी हैं,
प्रभु ने ऋषि-मुख से भर दी हैं।
वेद-कथा अतएव सुनो प्रिय।
सुनकर उसको नित्य गुनो प्रिय।
वेद-कथामृत पान करो प्रिय।
ईश्वर का अब ध्यान करो प्रिय।

इतिहास-कथा

रानी सारंधा

'आज मेरा मस्तक गर्व और गौरव से ऊँचा हो गया है। आज से मैं फिर रानी कहलाऊँगी, स्वतंत्र नरेश की रानी।'

यह कहानी न दादी नानी की है, न परियों की। न जादू की है न दानवों की, न देवताओं की। यह कहानी है वीर रानी सारंधा की जो ओरछा नरेश के महलों की शोभा थी; जिसकी वीरता आज भी बुंदेलखण्ड की पहाड़ियों में गूंज रही है। उसके पति का नाम था चंपतराय। शहंशाह औरंगजेब भी चंपतराय के नाम से भय खाता था।

औरंगजेब और ओरछा नरेश में तनातनी चलती ही रहती थी। एक बार काफी देर तक दोनों के बीच युद्ध चलता रहा। दिन प्रतिदिन दोनों ओर की सेना की हानि हो रही थी। दोनों पक्ष अपने-अपने स्थान पर डटे थे। औरंगजेब ने सोचा- 'ओरछा नरेश को पराजित करना इतना सहज नहीं; इस वीर से सन्धि करना ही उचित रहेगा।' यह सोचकर उसने चंपतराय के पास अपना दूत भेजा। दूत ने राजा से कहा, 'बादशाह सलामत आपकी ओर सुलह का हाथ बढ़ाते हैं और वे आपको बनारस की जागीर बख्शते हैं।'

चंपतराय भी निरंतर युद्ध से उकता चुके थे। उन्होंने औरंगजेब का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। वे ओरछा से बनारस आ गए और वहीं राजकाज करने लगे। अब वे स्वतंत्र नहीं थे; शहंशाह औरंगजेब के अधीन थे। रानी सारंधा को यह पराधीनता बहुत ही खलती थी। उसके मुख की मुस्कान मिट चुकी थी। वह सदैव उदास सी रहती थी। एक दिन रानी की आँखों में आंसू देखकर चंपतराय ने कहा, 'आपकी आँखों में आँसू? अपने हृदय की व्यथा मुझ से कहिए।'

'सुन सकोगे आप मेरा दुख?'-रानी ने रुंधे स्वर से कहा। राजा ने कहा, 'क्यों नहीं? मैं वीर हूँ, वीर का हृदय विशाल होता है।' रानी ने उलाहने भरे लहजे में कहा, ''महाराज! वहाँ मैं रानी थी, ओरछा नरेश की रानी। आज मैं औरंगजेब के जागीरदार की पत्नी हूँ; उस जागीरदार की जिसका मस्तक हर समय बादशाह के सामने झुकता है। जिसकी हर इच्छा, हर कार्य, हर फैसला बादशाह पर निर्भर है। यही है मेरे दु:ख का कारण।'

राजा ने कहा, 'पर यहाँ हमें युद्ध का कोई भय नहीं है। हम जितनी देर जीएंगे, सुख से, निर्भयता से तो जीएंगे।'

रानी ने विनम्रता से कहा, 'महाराज इसे आप सुख कहते हैं? इस पराधीनता को आप निर्भयता कहते हैं? औरंगजेब कभी भी आपको कुचल सकता है। ओरछा की खुली हवा, नदी नाले, झरने, लहलहाते खेत, भोले-भाले लोग सब ओरछा नरेश के पुजारी थे; आपके गीत गाते थे। पर यहाँ, यहाँ तो इच्छा अनिच्छा से बादशाह को ही दुआएँ दी जाती हैं।'

राजा इससे आगे और न सुन सके। उनकी सोई हुई आत्मा जाग उठी, ओज भर गया उनकी भुजाओं में, वीरता जाग उठी। कृतज्ञता प्रकट करते हुए उन्होंने कहा, महारानी जी आपने हमारी आँखें खोल दीं; हम आज ही बादशाह को पत्र लिखेंगे; हमें उनकी जागीर नहीं चाहिए, हम शीघ्र ही ओरछा लौट चलेंगे; हम अपनी जन्म-भूमि पर स्वतंत्रता से जीएंगे; हमारी अपनी इच्छाएँ होंगी, हमारे अपने सपने होंगे।'

रानी सारंधा की आँखों की चमक आ गई; वह खुशी के स्वर में बोली,'आज मेरा मस्तक गर्व और गौरव से ऊँचा हो गया है। आज से मैं फिर रानी कहलाऊँगी, स्वतंत्र नरेश की रानी। हम किसी भी मूल्य पर अपनी स्वाधीनता का बलिदान नहीं कर सकते।'

चंपतराय ओरछा लौट आए। प्रजा के हर्ष की सीमा न रही। चारों ओर खुशी की शहनाइयाँ बज उठीं। औरंगजेब को जब यह खबर मिली तो वह आग बबूला हो उठा। एक साधारण राजा उसकी दी हुई जागीर को ठुकराए, उसके निर्णय के विरुद्ध जाए! वह इस अपमान का बदला लेगा; वह ओरछा राज्य को तहस-नहस कर देगा। बादशाह कुछ भी करे, अब राजा चंपतराय को इसकी चिंता न थी। उनके

विचारों में नई शक्ति थी और निश्चय में फौलादी दृढ़ता।

इसी बीच एक और घटना घटी। औरंगजेब का एक सेनापति था; नाम था उसका बहादुरखाँ। वह लोभी प्रकृति का था। उसे चंपतराय का विशेष घोड़ा पंच कल्याणी बहुत पसंद था। कब से उसकी आँखें उसी घोड़े पर टिकी थीं। दैवयोग से एक दिन घोड़े को हथियाने का अवसर उसे मिल ही गया। चंपतराय का पुत्र छत्रसाल उसी विशेष घोड़े पर सवार होकर अकेला ही जंगल में घूम रहा था। बहादुरखाँ अपने कुछ सिपाहियों के साथ उधर ही आ निकला। उसने अकेले छत्रसाल को देखा; उस घोड़े की निराली छवि को देखा। इससे अच्छा अवसर उसे और क्या मिलेगा? उसने छत्रसाल से वह घोड़ा छीन लिया और भाग गया। छत्रसाल था तो वीर, परन्तु किशोर बालक और वह भी अकेला, इतने सैनिकों के सामने ठहर न सका।

उसने राजा की अंतिम इच्छा पूरी कर दी। शत्रु उनके समीप पहुँचे तो देखा दोनों ही अपनी आन पर बलिदान हो चुके थे। रानी मर कर भी कायर बहादुर खाँ को पराजित कर गई थी।

रानी सारंधा को यह खबर मिली तो उसकी आँखों से अंगारे बरसने लगे। राजा चंपतराय ओरछा से बाहर गए हुए थे। सारंधा तो राजपूत सिंहनी थी। उसने मंत्री और सेनापति को राजकाल संभाला और स्वयं चल पड़ी बादशाह से मिलने और बहादुरखाँ के अन्याय और चोरी की कहानी सुनाने। कुछ चुने हुए वीर सैनिक भी उसके साथ थे। मारकाट से, हिंसा से, चाहे जैसे भी हो, उसे घोड़ा तो वापिस लाना ही था।

साहस देखो सारंधा का। अकेली ही दनदनाती हुई, अपने घोड़े पर सवार, बादशाह के दरबार में जा पहुँची। सभी दरबारी चकित हो उठे। यह देवी है या मानवी? बादशाह सारी स्थिति भाँप गया। क्रोध को मन ही मन दबाकर उसने रानी से आने का कारण पूछा। रानी ने गरजते हुए कहा, 'पूछिए अपने सेनापति बहादुर खाँ से, जो राजकुमार से हमारा पंच कल्याणी घोड़ा छीन कर लाया है, हमारी सीमा में से। यह बहादुरी नहीं कायरता है। अकेले किशोर राजकुमार को बीस सैनिकों ने घेर लिया था। क्या यही आपके सेनापति की बहादुरी है? मुझे अपना घोड़ा वापिस चाहिए। मैं उसे लेकर ही जाऊँगी, किसी भी कीमत पर।'

बादशाह ने सोचा, इस समय रानी को शांत करना ही उचित होगा। उसने बहादुरखाँ से पूछा-'क्या रानी जी बजा फरमा रही हैं।' बहादुरखाँ ने अपना अपराध स्वीकार कर बादशाह के आगे सिर झुका दिया। क्रोध का प्रदर्शन करते हुए बादशाह ने कहा-'रानीजी से क्षमा माँग कर घोड़ा उन्हें अभी लौटाओ; आईन्दा कभी ऐसी गलती ना हो।' रानी अपना घोड़ा लेकर गर्व सहित वापिस लौट गई।

औरंगजेब ने यह नाटक तो खेला पर राजपूत रानी की वीरता और स्वाभिमान की छाप अपने हृदय से मिटा न सका। उसके मन में यह आग सुलगती रही। भरे दरबार में एक स्त्री के सम्मुख उसे मुँह की खानी पड़ी और वह भी अपने शत्रु की पत्नी से। उसने बहादुरखाँ को ओरछा पर आक्रमण करने का आदेश दिया। बहादुरखाँ को तो जैसे मुँह माँगी मुराद मिल गई। वह ओरछा पर आक्रमण करने चल पड़ा।

संयोग से इस बार भी रानी सारंधा किले में अकेली ही थी। उसे इस आक्रमण का पता चला तो वह स्तब्ध ही रह गई पर घबराई नहीं। वह तो वीरता और साहस की मूर्ति थी; चतुर भी कम न थी, राजनीति का भी उसे पर्याप्त ज्ञान था। उसने अपने एक विश्वस्त सैनिक को बुलाया और उसे कुछ समझाया। ओरछा पर आक्रमण होने से पहले ही वह बहादुरखाँ को गुप्त रूप से मिला और कहा, ''किले में रानी अकेली है। किले के मुख्य द्वार की सुरक्षा का भार मुझ पर सौंपा गया है। मैं आधी रात को वह द्वार खोल दूँगा, पर इसके बदले मुझे बड़ा भारी पुरस्कार मिलना चाहिए।'

बहादुरखाँ ने सोचा-'रानी तो है बला की दिलेर, उससे लड़ना जान जोखिम का काम है। यदि कुछ दे दिला कर ही काम बन जाए तो लड़ने की मुसीबत क्यों मोल ली जाए?' यह सोच उसने सौदा तय कर लिया और उस सैनिक को मुँह माँगा धन देकर रवाना किया।

नियत समय पर आधी रात को मुख्य द्वार खुला। बहादुरखाँ की सेना ने अंदर घुसना आरम्भ किया। पर यह क्या? अन्दर घुसते ही चारों ओर अंधेरा। नया स्थान, अनजान रास्ते, ऊपर से तीरों की बौछार। यह सब हुआ अचानक मगर एकदम और बड़ी ही फुर्ती से। मुगल सैनिक संभल ही न पाए। किले के अंदर आने वाली सेना मूली गाजर की तरह कटती गई, बाहर की सेना पर गोलों की वर्षा होती रही। किले के अंदर युवा, बच्चे, बूढ़े और स्त्रियाँ सभी

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

वेदोपदेश

हे प्रभो! आप कृपा करके हम में या दूसरों में जो द्वेष भावना या अधर्माचरण है, जिसके कारण हम अपने जीवन में दु:ख पाते हैं, उसे हम से दूर करो; हम सब प्राणिमात्र परस्पर एक दूसरे के साथ प्रीति रखने वाले हों तथा एक दूसरे के रक्षक होवें।

हम संसार के किसी भी प्राणी से द्वेष न करें

❑स्व० मनुदेव 'अभय' विद्यावाचस्पति

ओ३म् योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जंभे दध्म:।।

अथर्व० ३/२७/१

पदार्थ– य:=जो (अधर्माचरण) अस्मान्=हमारे प्रति, द्वेष्टि=द्वेष का कारण बनता है, यम=जिस (अधर्माचरण के प्रति) वयम्= हम लोग, द्विष्म:=अप्रीति रखते हैं, तम्=उस (अधर्माचरण को) व:=तुम=आपके जम्भे=खाने वाले,नष्ट करने वाले स्वभाव के अधीन, दध्म:=देते, करते हैं।

चिन्तन– वेद भगवान पूरे समाज में सामन्जस्य की भावनाएँ रखने की शिक्षा देते हैं। सामनस्य की शिक्षा देने वाला वेद पापी या अधर्मी व्यक्ति से द्वेष या अप्रीति रखने का उपदेश नहीं देता। वह तो पाप=अधर्माचरण से द्वेष या अप्रीति रखने का उपदेश देता है। अत: यहाँ द्वेष करने वाले को नष्ट करने की प्रार्थना नहीं है, अपितु द्वेष को दूर करने की प्रार्थना की गई है। यह अभिप्राय: संस्कृत के 'तत्साहचर्य' या 'तात्स्थ्य' नियम से जानना चाहिए। प्राणी मात्र के प्रति स्नेह और करुणा का भाव रखना चाहिए।

(पं० युधिष्ठिर मीमांसक, वैदिक-नित्यकर्म-विधि पृ० ४२)

मंत्रार्थ= जिस द्वेष भावना या अधर्माचरण से युक्त होकर कोई व्यक्ति हमारे साथ द्वेष-अप्रीति (दुश्मनी) रखता है अथवा जिस द्वेष भावना या अधर्माचरण (दुश्मनी) से हम अन्यों के साथ द्वेष-अप्रीति रखते हैं उस द्वेष भावना या अधर्माचरण को हम आपके हिंसक-नष्ट करने वाले स्वभाव के अधीन करते हैं।

हे प्रभो! आप कृपा करके हम में या दूसरों में जो द्वेष भावना या अधर्माचरण है, जिसके कारण हम अपने जीवन में दु:ख पाते हैं, उसे हम से दूर करो; हम सब प्राणिमात्र परस्पर एक दूसरे के साथ प्रीति रखने वाले हों तथा एक दूसरे के रक्षक होवें।

स्वाध्याय = प्रसिद्ध हिन्दी निबन्धकार श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'ईर्ष्या' नामक निबन्ध में वेद की भावना को अंगीकृत करते हुए लिखा है-'पापी से नहीं, पाप से घृणा करो।' विश्व में वैदिक संस्कृति को छोड़कर, अन्य किसी भी सभ्यता या संस्कृति में प्राणिमात्र के हित, मैत्री, कल्याण तथा सान्निध्य की ऐसी श्रेष्ठतम भावना नहीं पाई जाती।

अध्यात्म की दृष्टि से सतोगुण, रजोगुण एवं तमोगुण मनुष्य मात्र में पाये जाते हैं। इसी तारतम्य में काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, मोह, मद, मत्सर आदि मानसिक भावनाएँ भी सभी मनुष्यों में पाई जाती हैं। इन्हीं भावनाओं को पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक मूल प्रवृत्ति अथवा 'ईस्टिक्ट' कहते हैं। इन मूल प्रवृत्तियों से सभी मनुष्य प्रभावित रहते हैं।

जहाँ तक मन का सम्बन्ध है, मन संकल्प-विकल्प करने का एकमात्र यंत्र है। इन्हीं संकल्पों-विकल्पों के आधार पर मन की ये स्थितियाँ हैं :-

१-द्वेषवश किसी का बुरा चाहना।
२-ईर्ष्यावश किसी की उन्नति से जलना।
३-असत्य या अर्द्धसत्य बोलना।
४-उदासी, निराशा वा दु:ख का अनुभव होना।
५-काम (वासना) के आवेग से चित्त चलायमान होना।
६-क्रोध के वशीभूत होकर आन्तरिक अग्नि में जलना।
७-लोभ में फँसकर पाप का निश्चय कर बैठना।

८–मोह के कारण अज्ञान में फंसना।
९–अभिमान के कारण स्वयं को अन्यों से बड़ा समझ लेना।
१०–दूसरे मत वालों के प्रति असहिष्णु होना।
११–भय के कारण साहस न कर पाना।
१२–चिन्ता की ठण्डी आग में जलते रहना।
१३–स्वार्थ के वशीभूत होकर रहना।
१४–पाप में प्रवृत्त हो जाना।
१५–कृतघ्नतावश किसी के उपकार को भूल जाना।

यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जीवन में उत्साह, सुव्यवस्था, सन्तोष आदि आने से सुख मिलता है। जब हमारे अन्दर ये गुण आने लगते हैं तो इन दोषों को प्रयत्नपूर्वक प्रयास करने पर दूर किया जा सकता है। मनुष्य के अधिकतर दुःख ईर्ष्या आदि दुर्गुणों के कारण होते हैं। इन दुर्गुणों को दूर करके मनुष्य अनायास ही सुख प्राप्त कर सकता है। विवेकपूर्वक विचार करने से इन दुर्गुणों को दूर किया जा सकता है।

जैसा खाये अन्न, वैसा बने मन। एज डायट एज माइन्ड, यह कहावत बड़ी सटीक है। जीविका के साधन आय के स्रोत पवित्र ही होने चाहिएँ। जीवन निर्वाह तथा सुख के लिए आजीविका बहुत आवश्यक है। आजीविका भी पूर्ण सात्त्विक एवं सोद्देश्य होनी चाहिए। साध्य और साधन दोनों का पवित्र होना अनिवार्य है। यदि इनका सन्तुलन बिगड़ गया तो व्यष्टि और समष्टि; इहलोक और परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं।

जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं– ईर्ष्या के रहते न तो हम स्वयं की उन्नति कर सकते हैं और न दूसरों की उन्नति में सहायक बन सकते हैं। सामाजिक दृष्टि से यह अभाव ही हमारा पाप है।

निष्पक्ष रूप से सोचा जाये तो ईर्ष्या की अग्नि हमारे सम्मुख उपस्थित होने वाले में भी हो सकती है। कहते हैं– काम, क्रोध, मद, मोह, ईर्ष्या–द्वेष आदि भंवरे हैं जो संसार रूपी नदी में यत्र–तत्र विद्यमान रहते हैं। मानसिक रूप से ये बड़े मजबूत होते हैं। जिस प्रकार भँवर में फँसी नाव बड़ी मुश्किल से बच पाती है, कोई कुशल, बुद्धिमान, साहसी नाविक ही नाव को बचा पाता है अन्यथा नाविक, नाव तथा यात्री (सामान सहित) डूब ही जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ऊपर लिखे मानसिक विकारों में से किसी एक या अधिक विकारों में फंस जाने से मनुष्य भी डूब कर नष्ट हो जाता है। मृत्यु दो प्रकार की होती है। यथा–दैहिक मृत्यु तथा द्वितीय सामाजिक मृत्यु। दैहिक मृत्यु के बाद अन्तिम संस्कार द्वारा भौतिक शरीर पंच तत्त्वों में विलीन हो जाता है। परन्तु सामाजिक मृत्यु सर्वाधिक कष्टदायक और उत्पीड़नपूर्ण होती है। व्यक्ति जीवित रहते हुए सामाजिक दृष्टि से हेय, निम्न तथा उपेक्षित कोटि में आ जाता है। उसे न तो अन्दर ही चैन है और न बाहर।

भावनात्मक रूप से काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या तथा मद आदि मानसिक ग्रंथियाँ हैं। यदि इनका रचनात्मक ढंग से विवेकपूर्वक उपयोग किया जाये तो सभी मानसिक ग्रंथियाँ हानि की अपेक्षा लाभकारी ही सिद्ध होती हैं। बिच्छू समष्टि का सारा विष अपने डंक में भरकर चलता है, यही विष अनेक रोगों में अमृत तुल्य बन जाता है। वृक्ष कार्बन डाई आक्साईड लेकर प्रतिदान में आक्सीजन (प्राणवायु) प्रदान करते हैं। यदि संसार से वृक्षों का विनाश हो जाए तो फिर यही विषैली गैस प्राणिमात्र के लिए प्राणहरण करने वाली बन जाए। देश के पूर्व राष्ट्रपति एवं महान् वैज्ञानिक डॉ० अब्दुल कलाम ने ठीक ही कहा है–

'प्रत्येक वृक्ष २० किग्रा कार्बन डाई आक्साइड सोखता है। इसके बदले में प्रत्येक वृक्ष १२ किग्रा आक्सीजन छोड़ता है। भारी संख्या में वृक्ष काटने तथा जंगलों को नष्ट कर बहुमंजिले भवन बनाए जाने के कारण कार्बन डाइ आक्साईड आकाश तथा अन्तरिक्ष में इकट्ठा हो गया है। यह सब अशुभ और मानव जाति के लिए हानिकारक है।'

हीनता की भावना उग्र होने के कारण तथा असमान स्थिति, मूल्य और वस्तु सामग्री को देखकर मनुष्य ईर्ष्या की ठण्डी आग में जलने लगता है। ईर्ष्या की अग्नि से झुलसा व्यक्ति सर्वप्रथम अपनी ही हानि करता है, जबकि सामने वाला बिल्कुल सुरक्षित रहता है। डॉक्टरों ने अनेक परीक्षणों द्वारा यह प्रमाणित किया है कि इन्हीं अनेक मानसिक ग्रंथियों के कारण अनेक शारीरिक रोग 'मन की आधि और तन की व्याधि' उत्पन्न हो जाती हैं। ये ही शारीरिक विकार के मूल कारण हैं।

इन्हीं तत्त्वों पर विचार करके महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज के नवम् नियम में कहा है– प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। अर्थात् हम किसी से ईर्ष्या या डाह बिल्कुल न करें बल्कि दूसरों की उन्नति में प्रसन्न होते रहें। इस प्रकार हम दुरितों को दूर कर उनके स्थान पर सद्गुणों को स्थान दें। क्योंकि जब दुर्गुण स्थान खाली करेंगे तभी तो गुण अपना स्थान ग्रहण करेंगे। हमारी बुद्धि सात्त्विक हो, श्रेष्ठ हो, और हमारे गुण कर्म स्वभाव में प्रविष्ट होकर हमें निरन्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर करे, यही कामना है– धियो यो नः प्रचोदयात्।।

मैं यह चाहता हूँ न वह चाहता हूँ।
प्रभु बस तुम्हारी दया चाहता हूँ।।

केवल शास्त्र को जानने से ब्रह्मज्ञान नहीं हो सकता-२

❑**अध्यापक देवराज आर्य**, आर्य टेंट हाऊस, रोहतक मार्ग जींद-१२६१०२

पवित्र आचरण के अभाव में आज समाज, राष्ट्र और संसार दशा और दिशा भ्रमित हो गया है। चारों ओर भ्रष्टाचार, दुराचार, रिश्वत, मिलावट, छलकपट, हत्या, चोरी-डकैती तथा बलात्कार की घटनाओं से प्रत्येक नर नारी भयभीत है। आज मानवता रो रही है, दानवता दनदना रही है। जिन लोगों का जीवन समाज और राष्ट्र के लिए आदर्श होना चाहिये था वही दुराचार, रिश्वत और बलात्कार में लिप्त मिलते हैं।

पिछले लेख में अविनाशी ब्रह्म को जानने तथा उसकी प्राप्ति हेतु पाँच सत्य धारण करने के विषय में बताया जा रहा था, जिनमें सत्य आहार, सत्य विचार, सत्य व्यवहार के बारे में हम पढ़ चुके हैं। अगला सत्य है- श्रेष्ठाचार या

४-सत्याचार :- पवित्र आचरण का नाम ही सत्याचार है। पिछले तीनों सत्य इसमें आकर मिल जाते हैं। यदि किसी मनुष्य का आहार, विचार और व्यवहार पवित्र एवं शुद्ध है तो उसका आचार सत्य एवं पवित्र हो सकता है अन्यथा नहीं। यदि हम मान लीजिए संध्या, हवन एवं स्वाध्याय आदि वैदिक धर्म करते हैं परन्तु हमारा सामाजिक व्यवहार एवं आचार शुद्ध नहीं है तो हमारे द्वाराकिये गए वैदिक कर्मों का समाज पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। धार्मिक कहे जाने वाले या धर्म का उपदेश करने वाले व्यक्ति के जीवन में यदि नैतिकता नहीं है, उसका आचार, व्यवहार धार्मिक पुरुषों के अनुरूप नहीं है तो लोग धर्म को केवल ढोंग समझने लगेंगे। धर्म, व्यवहार और आचार मात्र कहने की चीज नहीं है, यह जीवन में ढ़ालने की प्रक्रिया है। जिनकी कथनी और करनी में अन्तर है वे कदापि धार्मिक वक्ता नहीं हो सकते। ब्रह्म ज्ञान होने का तो उनको प्रश्न ही पैदा नहीं होता।

सच्चे और व्यवहारी बनो, सब जगह यह शोर है।
पर खूब कहना और है, और खूब करना और है।।

आचार शुद्धि के विषय में धर्म शास्त्र कहते हैं-

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च।।

वेदों और स्मृतियों में कहा हुआ जो आचरण है वही सर्वश्रेष्ठ धर्म है। महर्षि दयानन्द इस विषय में कहते हैं-

जो सत्यभाषणादि कर्मों का आचरण करना है, वही वेद और स्मृति में कहा हुआ आचार है। आचरणहीन को वैदिक कर्मों की प्राप्ति नहीं होती। धर्म का मूल आचार है। वास्तव में श्रेष्ठ सत्याचरण का नाम ही दूसरे शब्दों में धर्म है। लोग कहते हैं कि रावण चारों वेदों एवं धर्म शास्त्रों का ज्ञाता था परन्तु आचारहीन होने के कारण वह दुर्गति एवं मृत्यु को प्राप्त हुआ। इसी बात को लेकर इतिहास यह साक्षी दे रहा है कि केवल जानने और पढ़ने मात्र से कोई विद्वान् या धर्मात्मा नहीं हो सकता।

आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः।

आचारहीन व्यक्ति को तो वेद भी पवित्र नहीं कर सकते। आचरण की पवित्रता बनाये रखना हमारा परम कर्त्तव्य है। सत्य एवं पवित्र आचरण को दुनिया के विद्वानों तथा दार्शनिकों ने सबसे अधिक महत्त्व दिया है।

इस पवित्रता के कारण ही हमारा देश संसार का गुरु कहलाया। परन्तु जबसे हमने वेद विद्या को भुला दिया तथा वेद विहित कर्मों को करना छोड़ दिया तभी से राष्ट्र का पतन आरम्भ हो गया।

पवित्र आचरण के अभाव में आज समाज, राष्ट्र और संसार दशा और दिशा भ्रमित हो गया है। चारों ओर भ्रष्टाचार, दुराचार, रिश्वत, मिलावट, छलकपट, हत्या, चोरी-डकैती तथा बलात्कार की घटनाओं से प्रत्येक नर नारी भयभीत है। आज मानवता रो रही है, दानवता दनदना रही है। जिन लोगों का जीवन समाज और राष्ट्र के लिए आदर्श होना चाहिये था वही दुराचार, रिश्वत और बलात्कार में लिप्त मिलते हैं। बताओ साधारण जनता किसका आश्रय ले, और किसको अपना दर्द सुनाये! इस पवित्र भारतभूमि पर ऐसे सदाचारी, धर्मनिष्ठ, त्यागी-तपस्वी, वेद ज्ञाता विद्वान् पैदा हुए जिन्होंने हमें पवित्र जीवन जीने की कला सिखाई और मार्गदर्शन कर बताया कि-

मातृवत् परदारेषु पर द्रव्येषु लोष्ठवत्,
आत्मवत् सर्वभूतेषु, यः पश्यति सः पण्डितः।।

उक्त महावाक्य को जब तक जीवन में धारण नहीं

करते तब तक कोई भी व्यक्ति सदाचारी कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता। आओ हम अपने पूर्वजों के पद चिह्नों पर चलकर राष्ट्र के गौरव एवं समाज के सम्मान को पुनः प्राप्त करने का यत्न करें।

५– सत्य आधारः क्या होता है आधार?

कोई भी वस्तु जिस किसी के सहारे होती है वह उसका आधार है। जैसे एक भवन नींव और पिल्लरों के ऊपर खड़ा है, ये भवन का आधार हैं। इसी प्रकार नींव और पिल्लरों का आधार भूमि है और भूमि का आधार क्या है? किसके ऊपर और किसके सहारे भूमि खड़ी है? यहाँ आकर वार्त्ता कुछ रुक जाती है। क्यों जी? इस मनुष्य जीवन का आधार क्या है? माता–पिता, भाई बन्धु, स्त्री–पुत्र, मित्र, धन, मकान, जमीन या कोई बड़ा अधिकार इस जीवन का आधार हो सकता है? हम गहन विचार करने के बाद इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि कोई भी सांसारिक वस्तु इस मानव जीवन का सत्य आधार नहीं हो सकती। क्योंकि कोई भी वस्तु यहाँ स्थिर नहीं है।

किस संग कीजै मित्रता, सब जग चालनहार।
केवल निश्चल है प्रभु, उस संग कीजै प्यार।।

यदि कोई सदा रहने वाली शक्ति है तो उसका नाम है परमात्मा, जिसको संसार के लोग अनेक नामों से पुकारते हैं। अनेक स्थानों पर उसको खोजने के लिए जाते हैं। अपनी बुद्धि के अनुसार उसके कितने ही रूप, रंग जड़ पदार्थों से निर्मित करके भोग लगाते और स्तुति–प्रार्थना करके अपनी मनोकामनायें पूर्ण करने हेतु आशा लगाये रहते हैं।

एक स्थान पर मैंने पूछा– बताओ, यह संसार किसने बनाया है? सभी एक स्वर से बोले परमात्मा ने बनाया है। फिर मैंने पूछा कि ये इतने सारे भगवान देवी देवता जो मिट्टी, पत्थर और धातु से बनाये गये हैं, ये किसने बनाये? बिना विचारे ही कितने लोग बोले कारीगरों ने बनाये हैं। आश्चर्य है कि इस ब्रह्माण्ड की रचना परमात्मा करता है और वह एक है; परन्तु इस मनुष्य ने एक नहीं अनेकों परमात्मा बना दिये और वे बाजार में बिक रहे हैं।

विचार करते हैं परमात्मा बड़ा है या मनुष्य अथवा कोई देवी देवता बड़ा है। वह परमात्मा जड़ है या चेतन, साकार है या निराकार, सर्वज्ञ है या अल्पज्ञ, अजन्मा है या जन्म लेता है? वह प्रभु सर्वाधार है अथवा उसका भी कोई आधार है? इस रहस्य को ज्ञानपूर्वक समझे बिना– अर्थात् सत्य आधार को जाने बिना कोई भी व्यक्ति कभी भी ब्रह्म ज्ञानी नहीं हो सकता। कितने ही धनी–मानी, व्यापारी, राजनेता एवं पदाधिकारी व्यक्ति अपने स्वार्थ की सिद्धि हेतु कारीगरों द्वारा बनाई गई जड़ मूर्तियों के आगे सिर झुकाते एवं प्रार्थना करते देखे जा सकते हैं। परन्तु बुद्धि होते हुए भी उनको यह ज्ञान नहीं है कि इस जड़ पदार्थ में हमारी मनोकामना पूर्ण करने की सामर्थ्य नहीं है।

अब आप थोड़ा सा बुद्धिपूर्वक विचार करें। क्या ऐसे पत्थर, मिट्टी और धातु के बनाये भगवान और देवी देवता, राष्ट्र रक्षा समाज कल्याण परिवार में सुख–शांति, पुत्र–प्राप्ति तथा राजनेता बनने में सहायक होकर कभी धन वर्षा कर सकते हैं? कदापि नहीं। तो सत्य आधार को जानें– वेद इस विषय में कहता है कि–

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरँ शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभू स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।। यजु०४०/८

वेद परमात्मा की पवित्र वाणी है। जिसमें बताया गया है कि हे मनुष्यो! वह परमात्मा (परि अगात्) आकाश के तुल्य सर्वत्र व्याप्त हो रहा है। फिर कैसा है? (शुक्रम्) शीघ्रकारी, सर्वशक्तिमान, प्रकाशवान (अकायम) स्थूल–सूक्ष्म और कारण शरीर रहित है। तो कैसा है? (शुद्धम्) अविद्यादि दोषों से रहित, सदा पवित्र (अपापविद्धम्) जो पाप फलों से सदा रहित है (कविः) सबको देखने वाला (मनीषीः) सब जीवों के मनों की वृत्तियों को जानने वाला अर्थात् अनन्त ज्ञानवान (परिभूः) सर्वोपरि, दुष्टों को तिरस्कृत करने वाला (स्वयम्भूः) किसी का आश्रय न चाहने वाला (समाभ्यः) सबको समान समझने वाला (शाश्वतीभ्यः) प्रवाह रूप से प्रजाओं को (याथातथ्यतः) कर्मानुसार (अर्थान्) फलरूप पदार्थों को देने वाला (व्यदधात्) यथायोग्य फलदाता है।

जिसमें दुःख, कष्ट, क्लेश, अज्ञान आदि कुछ भी नहीं हैं, वही ईश्वर सदा स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने योग्य है। वही समस्त संसार का आधार है। इस विषय में योग दर्शनकार महर्षि पतंजलि कहते हैं कि–

क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः ।।
योग० १/२४

अविद्यादि पांच क्लेश, शुभाशुभ मिश्रित कर्म, कर्मों का फल सुख दुःख, उनके भोगों के संस्कार; इन सबसे सम्बन्ध रहित (पुरुषविशेषः) जीवों से भिन्न स्वभाव वाला चेतन विशेष ईश्वर है। वह परमात्मा ज्ञान की पराकाष्ठा है, वह सर्वज्ञ है। इन गुणों से युक्त चेतन, सर्वशक्तिमान् सत्ता का नाम सर्वाधार है। वही सबका आधार है, उसका आधार कोई नहीं है। प्रतिदिन प्रातः और सांयकाल प्रत्येक नर नारी को उसकी उपासना अवश्य करनी चाहिए। वही सब कामों का पूर्ण करने हारा, यथायोग्य कर्म फल प्रदाता है। अधिक जानकारी के लिए सत्यार्थ प्रकाश अवश्य पढ़ें।

स्वास्थ्य-चर्चा

हल्दी के गुणों को जानिये

❑आचार्य बालकृष्ण जी महाराज

शारीरिक क्षति जैसे- चोट, मोच, अंदरूनी घाव को ठीक करने, सर्दी जुकाम व खांसी आदि बीमारियों को ठीक करने आदि के अतिरिक्त सौंदर्य प्रसाधन, धार्मिक व सामाजिक मांगलिक कार्यक्रमों में हल्दी का प्रयोग पारम्परिक रूप से किया जाता है।

क्या हल्दी के इन गुणों से आप परिचित हैं? यह व्यंजनों के स्वाद में तो इजाफा करती ही है, साथ ही इसमें अनेक औषधीय गुण भी होते हैं। त्वचा, पेट और शरीर की कई बीमारियों में हल्दी का प्रयोग किया जाता है। हल्दी का प्रयोग लगभग सभी प्रकार के खाने में किया जाता है। हल्दी के पौधे से मिलने वाली इसकी गांठें ही नहीं, बल्कि इसके पत्ते भी बहुत उपयोगी होते हैं। हजारों साल से भारतीय खाने में आवश्यक रूप से इस्तेमाल होने वाली हल्दी सेहत के लिए भी फायदेमंद है। भारतीय लोक कथाओं, संस्कृति एवं परंपराओं में हल्दी का इस्तेमाल सदियों से उसके विशिष्ट गुणों के चलते विभिन्न रूपों में किया जाता रहा है। दादी माँ के नुस्खों में शारीरिक क्षति जैसे- चोट, मोच, अंदरूनी घाव को ठीक करने, सर्दी जुकाम व खांसी आदि बीमारियों को ठीक करने आदि के अतिरिक्त सौंदर्य प्रसाधन, धार्मिक व सामाजिक मांगलिक कार्यक्रमों में हल्दी का प्रयोग किया जाता है। आइये और जानते हैं हल्दी के स्वास्थ्यवर्धक और सौंदर्य के गुणों के बारे में--

स्वास्थ्य और सौंदर्य का खजाना हल्दी-

1- यह एक प्राकृतिक एंटिसेप्टिक एवं एंटिबैक्टेरियल एजेन्ट है। हल्दी का पावडर जले और कटे अंग पर लगाने से संक्रमण का जोखिम कम हो जाता है।

2- हल्दी को फूलगोभी के साथ मिलाकर खाने से प्रोस्टेट कैंसर की आशंका जाती रहती है। इसके अलावा अगर प्रोस्टेट कैंसर हो तो उसका बढ़ना रुक जाता है।

3- चूहों पर हुए प्रयोग से पता चला है कि हल्दी स्तन कैंसर को फेफड़ों में जाने से रोक देती है।

4- हल्दी से मेलानोमा यानी काले तिल उभरना रुक सकता है। इसके अलावा मौजूद मेलानोमा सेल्स आत्महत्या कर लेते हैं। हल्दी त्वचा का रूप निखारने के लिए सदियों से भारत में इस्तेमाल की जाती रही है।

5- बचपन में होने वाले ल्यूकेमिया यानी रक्तकैंसर का जोखिम कम हो जाता है।

6- लिवर शुद्धि के लिए यह एक प्राकृतिक छन्नी है।

7- हल्दी मस्तिष्क में बनने वाले एम्लोयड प्लॉक की वृद्धि एवं निर्माण रोककर एल्जाइमर्स की बढ़त पर रोकथाम कर लेती है।

8-दमा के मरीजों को दूध में हल्दी चूर्ण मिलाकर सुबह शाम लेना चाहिए।

9-मोच या हड्डी टूट जाने पर हल्दी का लेप लगाएं।

10-हल्दी और गुड़ को मिलाकर खाने से पेट के कीड़े मर जाते हैं।

11-मुंह में छाले हो जाने पर गुनगुने पानी में हल्दी पाउडर डालकर कुल्ला करें।

12-दरदरी पिसी हल्दी को ताजी मलाई के साथ मिलाकर चेहरे व हाथ पर लगा कर सूखने दें। गुनगुने पानी से चेहरा धो लें। त्वचा चमक उठेगी।

13-लिवर के मरीजों के लिए काफी फायदेमंद होती है।

14-मासिक के दिनों में पेट दर्द होने पर गरम पानी के साथ हल्दी को लेने से दर्द से राहत मिलती है।

15-प्रतिदिन एक चुटकी हल्दी चूर्ण को खाने से भूख बढ़ती है।

16-हल्दी की गांठ को पानी के साथ मिलाकर पिस लें। नहाने से पहले इसे उबटन की तरह लगाएं। हफ्ते भर में त्वचा में निखार आएगा।

18-चर्म रोग में हल्दी औषधि का काम करती है।

19-बिच्छू, मक्खी जैसे किसी विषैले कीड़े के काटने पर हल्दी का लेप लगाना चाहिए।

20-दांतों से पीलापन दूर करने के लिये हल्दी में सेंधा नमक व सरसों का तेल मिलाकर दांतों को साफ करें।

हल्दी के औषधीय प्रयोग

सर्दी-खांसी :- हल्दी के टुकड़े को घी में सेंककर रात्रि को सोते समय मुंह में रखने से कफ, सर्दी और खांसी में लाभ होता है। हल्दी के धुंए का नस्य लेने -नाक से सूंघने से सर्दी व जुकाम में तुरंत आराम मिलता है। अदरक एवं ताज़ी हल्दी के एक-एक चम्मच रस में शहद मिलाकर सुबह-शाम लेने से कफ दोष से उत्पन्न सर्दी-खांसी में लाभ होता है।

पथ्य- भोजन में मीठे, पचने में भारी एवं तले हुए पदार्थ लेना बंद कर दें।

टांसिल- हल्दी चूर्ण को शहद में मिलाकर टांसिल

पर लगायें।

कोढ - गौमूत्र में तीन से पांच ग्राम हल्दी मिलाकर पीने से लाभ होता है।

मूत्ररोग- ताज़ी हल्दी एवं आंवले के दो-दो चम्मच रस में शहद डालकर पीने से प्रमेह में आराम मिलता है।

कृमि- 70 प्रतिशत बच्चों को कृमि रोग होता है। ताज़ी हल्दी का आधा से एक चम्मच रस रोज़ पिलाने से बालकों के कृमि रोग दूर होते हैं। अंजीर रात को भिगोकर सुबह खाली पेट खिलाने से भी कृमिरोग दूर होते हैं।

वजन कम करने के कुछ आसान उपाय

पूरी नींद यानी पूरी सेहत :

पर्याप्त नींद और तनाव का गहरा ताल्लुक है। कई शोध नींद और वजन के संबंधों के बारे में इशारा करते हैं। इनमें पाया गया है कि बहुत कम या बहुत अधिक नींद से वजन बढ़ने लगता है। अच्छी नींद लेने वाला व्यक्ति न सिर्फ तनाव मुक्त रहता है बल्कि मोटापा कम करने में भी मदद मिलती है।

वॉकिंग : उठाइए सेहत के कदम

पैदल चलने से शरीर की मांसपेशियों की अच्छी कसरत हो जाती है। कड़ी कसरत के 90 प्रतिशत लाभ मिल जाते हैं। एक मील यानी करीब 1.6 किलोमीटर पैदल चलने से 100 कैलोरी तक बर्न होती हैं। हफ्ते में अगर तीन दिन दो-दो मील की वॉक करें तो हर तीसरे हफ्ते आधा किलो वजन कम हो सकता है।

जल है तो जीवन है

पानी हमारे शरीर से विषैले पदार्थों को बाहर निकालने में बहुत मददगार होता है। जिससे आपका मेटाबोलिज्म तेज हो जाता है और आपका वजन कम होने लगता है। इसलिए दिन में कम से कम 10.12 गिलास पानी जरुर पियें। कई शोधों में माना गया है कि दिन में आठ से नौ गिलास पानी से 200 से 250 कैलोरी आप बर्न कर सकते हैं।

चबा चबाकर खाएं :

खाना धीरे-धीरे और अच्छी तरह चबाकर खाने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि खाना देर तक खाएंगे, कम खाना खा पाएंगे और इससे वजन भी नहीं बढ़ेगा। चबाकर खाने से खाना जल्दी पच जाता है और आपको बहुत ज्यादा देर तक भूख नहीं लगती।

फलों का रस :

फलों के रस में यदि ऊपर से चीनी न मिलाई गई हो तो वजन घटाने का यह बेहद कारगर उपाय होता है। सॉफ्ट ड्रिंक, कोल्ड ड्रिंक जैसे पेय पदार्थों से जहाँ वजन बढ़ता है वहीं दूध, पानी, नारियल पानी, जूस इत्यादि वजन कम करने में सहायक होते हैं।

बाल वाटिका

सम्पादक : सुमेधा

जानते हो!

-आदित्य प्रकाश

❖संसार का सबसे बड़ा पक्षी सारस है, इसकी १४-१५ प्रजातियों में से ६ भारत में पाई जाती हैं। सारस की लंबाई लगभग डेढ़ मीटर तक होती है।

❖फल्वरपेकर संसार का सबसे छोटा पक्षी है। इसकी अधिकतम लंबाई ६-७ इंच और वजन चार से पांच ग्राम होता है।

❖सबसे तेज गति से उड़ने वाला पक्षी भूरे गले और लंबी पूंछ वाला स्विफ्ट है। यह पक्षी २५० से ३०० किलोमीटर प्रति घंटा की गति से उड़ सकता है।

❖सबसे धीमी गति से उड़ने वाला पक्षी कठफोड़वा (वुडकाक) है। यह मात्र ८ किलोमीटर प्रति घंटा की रफ्तार से उड़ता है।

हास्यम्

✺कीर्ति कटारिया

☺एक नई आई मैडम ने बच्चों को पढ़ाते समय नरेन्द्र को अपने पास खड़ा कर लिया और एक एक करके डस्टर, छड़ी, अपना पर्स सभी चीजें नरेन्द्र को पकड़ाती गई। कक्षा समाप्त होने पर मैडम ने कहा- कितना अच्छा बच्चा है, वैसे तुम्हारा नाम क्या है?

नरेन्द्र-मेरा नाम है बैंच, तनै होर किमे धरणा हो तो धर ले।

☺मालिक - ओ रामू जरा सुनो तो--

नौकर-जी मालिक साहब!

मालिक- जरा देख तो आ कि सूरज निकला या नहीं?

नौकर- जी मालिक साहब, बाहर तो अंधेरा है।

मालिक- कामचोर! बाहर अंधेरा है तो क्या, तू टार्च जलाकर देख ले।

☺पहलवान-(घड़ीसाज से) इस घड़ी की मुरम्मत का क्या लोगे?

घड़ीसाज-जितने में खरीदी थी, ठीक उसका आधा दे देना।

पहलवान-ठीक है, मैंने दो घूंसे मार कर घड़ी ली थी, अब एक घूंसा खाने के लिए तैयार हो जाओ।

☺माँ-अरे, तुम फिर से लड़ने लगे?

हरसी-लेकिन माँ यह तो पहली वाली ही लड़ाई है।

☺ बंटी : आप अपना 'जन्म दिन' क्यों नहीं मनातीं?

दिव्या-मैं अपना 'जन्म दिन' इसलिए नहीं मनाती, क्योंकि मैं रात में पैदा हुई थी।

☺ एक व्यक्ति (कर्जदार से) तुम मेरे पैसे कब तक लौटा दोगे।

कर्जदार- मुझसे क्यों पूछते हो, मै क्या ज्योतिषी हूं?

☺हरसी- तुम बात करने से पहले अपने मुंह में चीनी क्यों डाल लेते हो?

अनु-क्योंकि माँ ने कहा है कि हमेशा मीठी जबान में बातें करनी चाहिएँ।

प्रहेलिका:

✺काटते हैं, पीसते हैं
बांटते हैं, पर खाते नहीं।

✺अंत कटे तो बनूं मैं थैला
आदि कटे तो बनूं बंदूक
सब्जी बनती मेरी खूब
अब तू मेरा नाम तो बूझ

✺पानी का मटका
पेड़ पर अटका
हवा का हो झटका
उसको नहीं खटका।

✺तीन पैर की तितली,
नहा-धोकर निकली।

✺दुबली-पतली गुन भरी,
सीस चलै निहुराय।
वह नारी जब हाथ मै आवै,
बिछुड़े देत मिलाय।

✺हाथी, घोड़ा, ऊंट नहीं
खाय न दाना घास
सदा हवा ही पर रहे
ले ना पल भर सांस

✺काला कुत्ता घर रखवाला
कौन गुरु का चेला है?
आसन मार मड़ी में बैठा
मंदिर मांझ अकेला है।

उत्तर : ताश के पत्ते, बैंगन, नारियल, समोसा, सुई, साईकिल, ताला

विचार कणिका:

❐प्रतिभा दीदी

❍दूसरों के लिए किए गए कार्यों से आत्मशुद्धि होती है, इससे अहंकार कम होता है।

❍आनन्द वह खुशी है जिसे भोगकर पछताना नहीं पड़ता।

❍पढ़ने और विचार करने के बाद आचरण करने से ही पूरा फल मिल सकता है।

❍सुधारक को सबसे पहले अपना सुधार करना चाहिए। क्योंकि गन्दगी से कभी सुगन्ध नहीं फैल सकती है।

❍बड़े आदमी इसलिए महान नहीं होते कि वे बड़े हैं, उनकी महानता इसमें है कि वे दूसरों को बड़ा बनाते हैं।

❍गुण एकान्त में विकसित होता है, परन्तु चरित्र का निर्माण संसार के भीषण कोलाहल में होता है।

❍कमाया हुआ धन अपना नहीं होता है, अपितु परोपकार में लगाया हुआ धन अपना होता है।

❍मीठा लगने वाला सच बोलो, कड़वा लगने वाला नहीं, पर मीठा लगने वाला झूठ भी न बोले, यही धर्म है।

प्रेरक-प्रसंग

❒सत्यसुधा शास्त्री

महर्षि का धर्म-दर्शन

मुम्बई में आर्यसमाज मन्दिर के निर्माण के लिए एक निधि खोली गई थी। लोग यथाशक्ति उसमें दान भी दे रहे थे। एक मारवाड़ी सज्जन महर्षि दयानन्द के समीप आए और प्रसन्नता से बोले-महाराज, मेरे पास दस हजार रुपये हैं, ये सारे रुपये मैं आर्यसमाज मन्दिर के लिए दान करना चाहता हूँ। कृपया यह तुच्छ भेंट स्वीकार करें।

महर्षि ने उनकी भावना का आदर करते हुए कहा-मैं अति प्रसन्न हूँ, कि आपके हृदय में इतना धर्म प्रेम है, लेकिन मैं आपकी संपूर्ण पूंजी लेकर आपके परिवार को भुखमरी की ओर नहीं धकेल सकता। मैं आपके परिवार को परमुखापेक्षी, परान्नपरायण, भिक्षुक नहीं बनाना चाहता। आगे महर्षि ने समझाया- उस मन्दिर की क्या शोभा, जिसके बनने से आपका व्यापार बंद हो जाए। आपकी गृहस्थ यात्रा न चल सके। हाँ आपसे एक हजार रुपया अवश्य ले सकता हूँ। महर्षि ने गहरी सांस लेते हुए कहा। वह सज्जन महर्षि के धर्म दर्शन को जान गद्‌गद हो उठे।

शूद्र का सहारा

आचार्य रामानुज वृद्धावस्था में एक ब्राह्मण शिष्य का सहारा लेकर गंगा स्नान के लिए जाया करते थे लेकिन लौटते समय वे एक शूद्र शिष्य के कंधे पर हाथ रखकर आते थे। एक दिन एक रूढ़िवादी ने रुष्ट होकर कह डाला-आचार्य, गंगा स्नान से शुद्ध होकर आपका शूद्र के शरीर का सहारा लेना उचित नहीं है।

आचार्य ने विनम्रता से कहा-जिसे आप शूद्र मानते हैं, स्नान के पश्चात् उसके कंधे पर मैं इसलिए हाथ रखता हूँ कि अपने उच्चकुल और उच्च जाति का अभिमान धो सकूँ, क्योंकि इस अभिमान के मैल को गंगा के स्नान से आज तक नहीं धो पाया।

सिकन्दर की माता

सिंकदर केवल छह वर्ष का था।

पटरानी, मां पिन्फाही ने, एक दिन पुत्र की कुहनी पर लगे मिट्‌टी के दाग को पोंछते हुए पूछा,''बेटे, तुम्हें किसी चीज की कमी नहीं है। तुम इस विशाल साम्राज्य के उत्तराधिकारी हो। तुम्हें इस समय, सबसे प्यारी चीज, कौन सी लगती है?''

''माँ !'' सिकंदर बोला। माँ ने उसकी मोहक नाक को स्नेहपूर्वक छूकर कहा,''नहीं। मेरा मतलब है, तुम्हें इस समय संसार की कौन-सी वस्तु, सबसे भली लगती है?''

''माँ से बड़ी भी कोई वस्तु है, माँ?'' सिकंदर का उत्तर सुनकर, माँ की आंखों में हर्ष के आंसू तैरने लगे। उसने राजकुमार को अंक में भरकर कहा,''तुम कोई साधारण बालक नहीं हो, सिकंदर। तुम्हारी उपलब्धियां निश्चय ही अद्वितीय होंगी, मेरे बेटे।''

सिकंदर ने माँ ने ममता-भरे हाथों को होठों से लगाकर उत्तर दिया,''मेरी सारी उपलब्धियों का सेहरा भी, तुम्हारे ही माथे होगा, माँ। अगर तुम तुझे यह संसार न दिखातीं, तो मेरा क्या अस्तित्त्व था?''

आपस की फूट

कुएं में बहुत से मेंढक रहते थे। एक बार किसी बात पर गंगदत्त नाम का मेंढक सबसे नाराज हो गया। सभी ने उसे मनाया लेकिन उसका गुस्सा शांत नहीं हुआ। वह उनको सबक सिखाना चाहता था। चम्पक नाम के एक बूढ़े सांप को देखकर उसके मन में विचार आया कि इसके द्वारा बदला लिया जा सकता है। उसने चम्पक से दोस्ती कर ली और अपने साथ कुएं में ले गया। सांप ने एक-एक करके सारे मेंढकों को खा लिया। इस काम में गंगदत्त ने भी उसकी मदद की। आखिर भूखा चम्पक गंगदत्त की तरफ ललचायी नजरों से देखने लगा। गंगदत्त ने दोस्ती की याद दिलाई, पर सांप ने उसकी एक न सुनी और उसको चट कर गया। घर के झगड़ों में बाहर वालों को डालने का यही परिणाम होता है।

ईश्वर विश्वास

स्वामी दयानन्द उन दिनों फर्रुखाबाद में धर्मप्रचार कर रहे थे। एक दिन एक दुष्ट व्यक्ति ज्वालाप्रसाद नाम के एक शराबी और मांसाहारी ब्राह्मण को पालकी में बैठाकर स्वामीजी के पास ले गया। वह स्वामीजी के सामने बैठकर उनको दुर्वचन कहने लगा। उसके व्यवहार से दु:खी होकर वहाँ बैठे भक्तों ने उसे पीट दिया। स्वामीजी को यह बात अच्छी नहीं लगी। इस घटना का बदला लेने के लिए ज्वालाप्रसाद का एक संबंधी बहुत से लठैतों को लेकर आया पर स्वामीजी के दर्शन करते ही उसके विचार बदल गए। लाला जगन्नाथ ने स्वामीजी को सुरक्षित स्थान पर रहने की सलाह दी। इस पर दृढ़ ईश्वरविश्वासी स्वामीजी ने कहा- यहाँ तो आप मेरी रक्षा कर लेंगे परन्तु अन्यत्र कौन करेगा? मैंनें आज तक अकेले भ्रमण किया है। आगे भी करूँगा। कई बार मेरे प्राण हरने की चेष्टा की गई है, परन्तु सर्वरक्षक परमात्मा ने सदा मेरी रक्षा की है, भविष्य में भी वही करेगा, आप चिन्ता न करें।

सच है, ईश्वर विश्वासी को किसी का भय नहीं होता।

पंचतंत्र की कहानी-

प्रस्तुति : **उषा सोनी**

व्यवहार बुद्धि

एक सरोवर मे तीन दिव्य मछलियाँ रहती थीं। वहाँ की सभी मछलियाँ उन तीनों को ही बहुत मानतीं थीं। एक मछली का नाम व्यवहारबुद्धि था। दूसरी का नाम मध्यमबुद्धि और तीसरी का नाम अतिबुद्धि था। अतिबुद्धि के पास ज्ञान का असीम भंडार था। वह सभी प्रकार के शास्त्रों का ज्ञान रखती थी।मध्यमबुद्धि को उतनी ही दूर तक सोचने की आदत थी, जिससे उसका वास्ता पड़ता था। वह सोचती कम थी, परंपरागत ढंग से अपना काम किया करती थी।

व्यवहारबुद्धि न परंपरा पर ध्यान देती थी और न ही शास्त्र पर। उसे जब जैसी आवश्यकता होती थी, निर्णय लिया करती थी और आवश्यकता न पड़ने पर किसी शास्त्र के पन्ने तक नहीं उलटती थी।

एक दिन कुछ मछुआरे सरोवर के तट पर आये और मछलियों की बहुतायत देखकर बातें करने लगे कि यहाँ काफी मछलियाँ हैं, सुबह आकर हम इसमें जाल डालेंगे। उनकी बातें मछलियों नें सुनीं।

व्यवहारबुद्धि ने कहा- हमें फौरन यह तालाब छोड़ देना चाहिए। पतले सोतों का मार्ग पकड़कर उधर जंगली घास से ढके हुए जंगली सरोवर में चले जाना चाहिये।

मध्यमबुद्धि ने कहा- प्राचीन काल से हमारे पूर्वज ठण्ड के दिनों में ही वहाँ जाते हैं और अभी तो वह मौसम ही नहीं आया है, हम हमारी वर्षों से चली आ रही इस परंपरा को नहीं तोड़ सकते। मछुआरों का खतरा हो या न हो, हमें इस परंपरा का ध्यान रखना है।

अतिबुद्धि ने गर्व से हँसते हुए कहा- तुम लोग अज्ञानी हो, तुम्हें शास्त्रों का ज्ञान नहीं है। जो बादल गरजते हैं, वे बरसते नहीं हैं। फिर हम लोग एक हजार तरीकों से तैरना जानते हैं, पानी के तल में जाकर बैठने की सामर्थ्य है, हमारी पूँछ में इतनी शक्ति है कि हम जालों को फाड़ सकती हैं। वैसे भी कहा गया है कि संकटों से घिरे हुए हो तो भी अपने घर को छोड़कर परदेश चले जाना अच्छी बात नहीं है। अव्वल तो वे मछुआरे आयेंगे नहीं, आयेंगे तो हम तैरकर नीचे बैठ जायेंगे। उनके जाल में आयेंगे ही नहीं, एक दो फँस भी गई तो पूँछ से जाल फाड़कर निकल जायेंगे। भाई! शास्त्रों और ज्ञानियों के वचनों के विरुद्ध मैं तो नहीं जाऊँगी।

व्यवहारबुद्धि ने कहा- मैं शास्त्रों के बारे में नहीं जानती, मगर मेरी बुद्धि कहती है कि मनुष्य जैसे ताकतवर और भयानक शत्रु की आशंका सिर पर हो तो भागकर कहीं छुप जाओ। ऐसा कहते हुए वह अपने अनुयायिओं को लेकर चल पड़ी।

मध्यमबुद्धि और अतिबुद्धि अपनी परम्परा और शास्त्र ज्ञान को लेकर वहीं रुक गयीं। अगले दिन मछुआरों ने पूरी तैयारी के साथ आकर वहाँ जाल डाला और उन दोनों की एक न चली। जब मछुआरे उनके विशाल शरीर को टांग रहे थे तब व्यवहारबुद्धि ने गहरी साँस लेकर कहा- इनके शास्त्र ज्ञान ने ही धोखा दिया। काश! इनमें थोड़ी व्यवहारबुद्धि भी होती। व्यवहारबुद्धि से हमारा आशय है कि किस समय हमें क्या करना चाहिए और जो हम कर रहे हैं उस कार्य का परिणाम निकलने पर क्या समस्यायें आ सकती है, यह सोचना ही व्यवहारबुद्धि है। बोलचाल की भाषा में हम इसे कॉमन सेंस भी कहते हैं। भले ही हम बड़े ज्ञानी ना हों मोटी किताबें ना पढ़ीं हों, लेकिन हम अपनी व्यवहारिक बुद्धि से किसी परिस्थिति का सामना आसानी से कर सकते हैं।

स्वामी भीष्म जी

कैसे शिक्षा पुरानी भुलाई गई है।।टेक।।
गर्भ से अन्त्येष्टि तक संस्कार करते थे।
पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य से प्यार करते थे।
गुरुकुल में पढ़ते थे इकरार करते थे।
गृहस्थी वेद विद्यालयों का उद्धार करते थे।
जो भी जिस प्रकार गृहस्थी धन कमाते थे।
नियम से दशमांश गुरुकुल में पहुंचाते थे।
इसलिये निःशुल्क गुरुकुल में पढ़ाते थे।
ब्रह्मचारिणी ब्रह्मचारी जीवन बनाते थे।
आज विषयों में जिन्दगी गंवाई गई।।१।।

गृहस्थी हवन सन्ध्या सदा पुण्य दान करते थे।
वेद के विद्वान का सन्मान करते थे।
सत्यासत्य की बुद्धि से पहिचान करते थे।
प्रातः सायं नित्य प्रभु का ध्यान करते थे।
गृहस्थ बना व्यभिचार का भण्डार आजकल।
विषय चक्की में पिस रहे नर नार आज कल।
हर प्रकार के फैशन हैं शृंगार आज कल।
युवक युवती हैं विषयों के बीमार आजकल।
ब्रह्मचर्य की शक्ति लुटाई गई।।२।।

वानप्रस्थी वन में जा निवास करते थे
अपां समीपे योग का अभ्यास करते थे।
ईश्वर को मन मन्दिर में तल्लाश करते थे।
वेद मंत्रों का अर्थ प्रकाश करते थे।
साधु पीवें सुल्फा चरस भांग आज कल।
गोली गण्डे दे और खावें भांग आज कल।
गृहस्थी देखने लगे सिनेमे सांग आज कल।
इसीलिये मुँह चिपके सूकी टांग आज कल।
बत्ती बिन तेल सूकी जलाई गई।।३।।

संन्यासी ही वेद का उपदेश करते थे।
छल कपट तज कर सच्चाई पेश करते थे।
गृहस्थियों के सारे दूर क्लेश करते थे।
गृहस्थियों से कार्य तीन विशेष करते थे।
बने साधुओं के ही हजारों पंथ आज कल।
सत्यासत्य गए भूल पंथ में संत आज कल।
सुरा सुन्दरी सेवन करे महन्त आज कल।
वर्ण आश्रमों का किया है अन्त आज कल।
भीष्म चक्कर पे दुनिया चढ़ाई गई।।४।।

जिन में ये हैं बुराई वो आर्य ना।।टेक।।
यज्ञ पांचों जो घर में रचाते नहीं।।
वेद विद्या बच्चों को पढ़ाते नहीं।
उर्दू इंगलिश पढ़ाई वो आर्य ना।।१।।

बूढ़े और बालकों की जो शादी करें।
विधवा घर में बैठाकर बरबादी करें।
बनती मुस्लिम ईसाई वो आर्य ना।।२।।

ईंट पत्थरों की पूजा घर नारी करें।
श्राद्ध मुर्दों के बहनें हमारी करें।
जाकर वर्णी मिठाई वो आर्य ना।।३।।

चाय बिस्कुट और अण्डे उड़ाते हैं जो।
सांग देखें सिनेमा में जाते हैं जो।
जिनकी लेडी लुगाई वो आर्य ना।।४।।

जाति पाँति के चक्कर में रहते हैं जो।
करना कुछ है और कुछ और कहते हैं जो।
करते जायें ठगाई वो आर्य ना।।५।।

हरदम झूठी गवाही में जाते रहें।
रिश्वत खोरी में जो धन कमाते रहें।
करते खोटी कमाई वो आर्य ना।।६।।

तन पे चोटी जनेऊ सजाते नहीं।
प्यारी गऊओं की सेवा उठाते नहीं।
लड़ते जो भाई भाई वो आर्य ना।।७।।

हुक्केबाजी को जो खोटी माने नहीं।
भीष्म प्रमाण प्रमेय को जाने नहीं।
करते नकली कविताई वो आर्य ना।।८।।

विदेश की चिट्ठी

हम अपने देश को सम्पन्न क्यों नहीं बना सकते ? :

आचार्य ज्ञानेश्वरार्य

26 जून 2014 **।।ओ३म्।।** **आबूधाबी (U.A.E)**

० ईश्वरकृपयात्र कुशल तत्रापि भवतु।

० अनेक आर्य सज्जनों के आमन्त्रण पर जून 13,14 को यहाँ पहुंचा। खाड़ी देशों की यह मेरी दूसरी यात्रा है। यहाँ मैं आर्य परिवारों में सांख्य दर्शन का अध्यापन, ध्यान, प्रवचन, शंका समाधान करता हूँ। जब भी अवकाश मिलता है, आस पास के देशों में भ्रमणार्थ जाता हूँ। दुबई देश में रहते हुवे मैंने अबु धाबी, शारजाह, अजमान फुजैराह, रस अल् खेमा आदि सात देशों की यात्रा की है। मुझे बहुत कुछ नया ज्ञान विज्ञान, प्रत्यक्ष देखने, सुनने, पढ़ने को मिला, यह मेरी 16वीं विदेश प्रचार यात्रा है।

० बीसवीं शताब्दी के मध्य तक इन खाड़ी देशों में, खारे समुद्र, रेत के टीलों, गर्म धूल भरी हवाओं के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। अत्यंत प्रतिकूल प्राकृतिक विपन्न जलवायु में ये कैसे जीते थे, यह कल्पना ही की जा सकती है। लेकिन आज वहीं पर अत्याधुनिक तथा विशाल बहुमंजिले आकर्षक भवनों को देखते हैं तो बड़ा आश्चर्य होता है, मन में विचार होता है कि कहीं स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं, कोई जादू तो नहीं देख रहे हैं!!! वास्तविकता यह है कि यह सब; मन में किसी उद्देश्य को बनाकर उसको पूरा करने हेतु प्रबल भावना, दृढ़ संकल्प, परम पुरुषार्थ तथा घोर तपस्या का परिणाम है।

० मैंने सुना कि यहाँ के (शेख) राजा जब अमेरिका, यूरोप आदि देशों की यात्रा करते हुए वहाँ की भौतिक सुख सुविधाओं से युक्त, सब प्रकार की उन्नति देखते थे तो उनके मन में यह विचार उत्पन्न होते थे कि क्या मेरे देश में ऐसे भवन, चौड़ी सड़कें, यातायात के साधन, होटल, रिसोर्ट, क्लब, बाग, बगीचे, मनोरंजन के साधन, व्यापार मण्डी, सुख सुविधाएं बनायी जा सकती हैं, जिनके कारण लोग आकर्षित होकर आवें, रहें ?

० बस एक दिन संकल्प कर लिया। योजनायें बनायी गई, अमेरिका, यूरोप, एशिया के देशों से सम्पर्क किया, मंत्रणा हुई, अनुबन्ध हुवे, लोहा, सीमेंट, पत्थर, लकड़ी, इंजीनियर, श्रमिक आदि जिन जिन साधनों की अपेक्षा थी, प्राप्त किये गए। कार्य प्रारंभ हो गया। शेख के मन में एक ही भावना कि कोई भी निर्माण हो, अद्भुत, अद्वितीय आकर्षक होना चाहिए। समुद्र में मीलों तक पत्थर, ककंर, रेत डालकर पहाड़ बना कर उन पर आकाश को छूने वाली ऊँची भव्य इमारतें बनायी गयीं और सुन्दर नगर बसाया गया। दूसरी तरफ भूमि में गहरी खाईयाँ खोदकर समुद्र के पानी को नहरों के रूप में फैला दिया गया। अन्य देशों से जहाजों में उपजाऊ मिट्टी मंगाकर रेत के मैदानों में बिछाकर बड़े-बड़े उद्यान, खेत, बगीचे, उपवन, वाटिकाएँ बना दीं। जहाँ घास का एक तिनका भी नहीं उगता था, वहाँ पर रंग-बिरंगे फूल-फल घास के मैदान बना दिये। बसों, रेलों, ट्रामों भण्डारों आदि की समुचित व्यवस्था करके सर्वत्र आवागमन को सरल बना दिया।

० कृत्रिम रूप से बने सभी साधन सुविधाओं से युक्त उत्तम व्यवस्था, कुशल प्रबंध, अनुशासन, दण्ड व्यवस्था के कारण विश्व के 200 से भी अधिक देशों के नागरिक यहाँ अनेक प्रकार के व्यवसायों में लगे हुए हैं। अमीरात के देश विश्व का एक महत्वपूर्ण व्यापारिक एवं पर्यटन का केन्द्र बन गया है। इन देशों के मुख्य नगरों में घूमते हैं तो यह भ्रम हो जाता है कि कहीं हम लंदन, पेरिस, टोक्यो, सिगांपुर में तो नहीं हैं ?

० इन देशों के वैभव सम्पदा विकास, उन्नति को देखकर वही प्रश्न मन में उपस्थित होता है कि ये देश अत्यंत प्रतिकूल वातावरण, जलवायु तथा विपन्नता के होते हुए कुछ ही वर्षों में देश को स्वर्ग के सामान सम्पन्न सुन्दर बना सकते हैं तो हम क्यों नहीं ? जहाँ पर हर प्रकार की प्राकृतिक सम्पदा साधन अनुकूलता हो। जिस देश में शिल्प कला, शिक्षा, चिकित्सा, विज्ञान, संस्कृति, सभ्यता, खान-पान, वेशभूषा, धर्म, आचार-विचार, व्यवहार सिद्धांत तथा श्रेष्ठ गौरव मयी आदर्श परम्परायें हजारों-लाखों वर्षों से चली आ रही हैं, वह उन्नत क्यों नहीं हो रहा है ? इन देशों के समक्ष

हमारे इस आर्यावर्त की ऐसी दुर्दशा क्यों है ? हमारे देश के अधिकांश लोग और उनका जीवन दयनीय, निकृष्ट, विपन्न घृणित तुच्छ हेय क्यों है ? हम चाहते ही नहीं हैं, चाहें तो हो सकता है।

०विश्व का भ्रमण करने के पश्चात् मेरी समझ में यही आया है कि हमने उन्नति की सीमा व्यक्ति या परिवार तक बना ली है। हमारे नगर, राज्य, राष्ट्र का नाम विश्व में हो, हमसे लोग प्रेरणा लें, सीखें अनुकरण करें, यहाँ आवें, हमारा सम्मान करें, ये विचार कभी भी मन में उठते नहीं हैं तो कार्य क्या होगा। हे देव, हमारे देश-वासियों की दयनीय दशा से उबर कर, सम्पन्न बनने की प्रेरणा आप ही प्रदान करो। हम अपनी लुप्त हुई गरिमा को पुनः जीवित करके, विश्व गुरु बन कर कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के आपके वेद उद्घोष को साकार करें, यही प्रार्थना है, स्वीकार करें- ज्ञानेश्वरार्य

दर्शन योग महाविद्यालय आर्यवन रोजड़ गुजरात में सघन साधना शिविर

आध्यात्मिक ज्ञान-विज्ञान-पिपासु, समाधि, वैराग्य, तत्वज्ञान के अभिलाषी, आत्मकल्याण के इच्छुक, अध्ययन-स्वाध्याय-प्रेमी, भद्रशील महानुभावो!

आपके प्रिय दर्शन योग महाविद्यालय, आर्यवन विकास फार्म ट्रस्ट, रोजड़ में योगाभ्यास के पथ पर आरोहण, प्रगति, सकल क्लेश के प्रक्षालन या अन्तः करण की परिशुद्धि, ऐहिक सुख-शांति एवं आत्मा व परमात्मा की प्राप्ति हेतु वैदिक दर्शनों के आधार पर एक वर्ष के लिए स्वामी ब्रह्मविदानन्द सरस्वती जी, आचार्य दर्शन योग महाविद्यालय की अध्यक्षता में सघन साधना शिविर के नाम से एक आध्यात्मिक ज्ञान गंगा की धारा तिथि- **आश्विन शु० ७/२०७१ से आश्विन कृ० ३/२०७२ तक तदनुसार १ अक्टूबर २०१४ से ३० सितम्बर २०१५** तक प्रवाहित होने जा रही है। इस शिविर के लिए पूज्य स्वामी सत्यपति जी महाराज का आर्शीवाद व शुभकामनाएं भी प्राप्त हैं।

आपसे निवेदन है कि इस पुनीत अवसर को अपने जीवन से सम्बद्ध करें। परम पिता की महती कृपा से आपको पर्याप्त सफलता मिलेगी। क्योंकि जब हम अच्छा बनने के लिए तैयार हो जाते हैं और पुरुषार्थ आरंभ कर देते हैं तब ईश्वर की प्रेरणा से अच्छी बातों का ज्ञान हमारे हृदय में उत्पन्न होने लगता है। पुनः तदनुकूल उपलब्धियों का लाभ शिविरार्थीगण भी प्राप्त कर सकेंगे।

शिविर में प्रवेश हेतु शिविरकाल तक के लिए प्रत्येक शिविरार्थी से निम्नलिखित छः बातें सामान्य रूप से अनिवार्यतया अपेक्षित रहेंगी -

१ पूरे काल तक विद्यालय में रहना होगा। मध्य में कोई अवकाश नहीं होगा।

२ किसी भी व्यवसाय, अधिकार या पारिवारिक दायित्व में सम्बद्ध नहीं रहेंगे।

३ विशेष निमित्त के बिना दूरभाष आदि से बाह्य व्यक्ति से कोई सम्पर्क नहीं रखेंगे।

४ पूरे वर्ष मौन रहना होगा। परस्पर में वार्तालाप हेतु कक्षा आदि से अतिरिक्त काल में एक घण्टे का दैनिक अवकाश रहेगा।

५ योग, सांख्य और वैशेषिक इन तीन दर्शनों में से कोई एक दर्शन विधिवत् पढ़े हुए हों।

६ स्वस्थ एवं दिनचर्या पालन में समर्थ हों। किसी सेवक पर आश्रित न हों।

शिविर में माताएँ व बहनें भी भाग ले सकती हैं। आवेदन की अन्तिम तिथि १५ अगस्त २०१४ । शिविर में भाग लेने के इच्छुक आवेदक शीघ्र सम्पर्क करें। स्थान सीमित हैं और स्वीकृति मिलने पर ही प्रवेश सम्भव होगा। ब्रह्मचारी एवं सन्यासियों हेतु शिविर निःशुल्क होगा।

विशेष द्रष्टव्य – आंशिक या श्रोता के रूप में शिविर में भाग लेने वाले व्यवस्थापक से सम्पर्क करें। वे अपनी व्यवस्था के अनुसार अनुमति दे सकेंगे। स्थान सीमित होने के कारण पूर्व सूचना व स्वीकृति के उपरान्त ही पधारें।

मो० ०९४०९४१५०११, ०९४०९४१५०१७, ०९४०९४१५०१७, फो० ०२७७०-२८७४१८

भवदीय

स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक	मनसुखभाई धनजीभाई वेलाणी	ब्र० दिनेश कुमार
निदेशक- दर्शन योग महाविद्यालय	प्रमुख - आर्यवन विकास फार्म	व्यवस्थापक- दर्शन योग महाविद्यालय

पाकिस्तान से आये हिन्दू परिवार के तारो जी की बेटी गोपनी की शादी सम्पन्न

-विनोद बंसल

नई दिल्ली, विश्व हिन्दू परिषद कंझावला जिला द्वारा पाकिस्तान से आये हिन्दू परिवार के तारो जी की बेटी गोपनी की शादी धूमधाम से की गई। कंझावला स्थित समाज सेवी धर्मवीर के फार्म हाऊस में हुए इस वैवाहिक कार्यक्रम में समाज के अनेक संभ्रान्त अतिथियों ने वर वधु को आशीर्वाद देकर उनके उज्ज्वल वैवाहिक जीवन की शुभ कामनाएं दीं। विहिप दिल्ली के मीडिया प्रमुख श्री विनोद बंसल ने बताया कि कंझावला गाँव के पास ही पाकिस्तान से आए अनेक हिन्दू परिवार रह रहे हैं। कुछ परिवार फरीदाबाद व एनसीआर के अनेक स्थानों में भी विना किसी सरकारी मदद, सुविधाओं के अपना गुजर-बसर कर रहे हैं। फरीदाबाद रह रहे एक लड़के से कंझावला में रह रही गोपनी नामक लड़की की शादी में अनेक समाज सेवी व्यक्तियों ने न केवल शादी की समस्त व्यवस्थाएँ कीं बल्कि स्वयं अपनी उपस्थिति दर्जा करा वर-वधु को आशीर्वाद भी दिया। इस अवसर पर विश्व हिन्दू परिषद के विभाग मंत्री श्री मेवा राम, जिला अध्यक्ष श्री विश्व नाथ, जिला मंत्री श्री धर्मवीर व श्री कमलेश शुक्ला, भगिनी निवेदिता सेवा न्यास के महामंत्री श्री महावीर प्रसाद गुप्ता तथा समाज सेविका कु0 अर्चना के साथ पाकिस्तान से आए अनेक हिन्दू परिवार उपस्थित थे।

ओ३म्

M- 98968 12152

रवि स्वर्णकार

हमारे यहाँ सोने व चांदी के जेवरात आर्डर पर तैयार किये जाते हैं।

प्रो० रविन्द्र कुमार आर्य

आर्य समाज मंदिर, रेलवे रोड़, जीन्द (हरि०)-१२६१०२

आर्यसमाज वर्धा में पञ्चदिवसीय वेद-कथा सम्पन्न

58 दम्पतियों द्वारा की गई 21 वेदियों में पूर्णाहुति

-रामकृष्ण आर्य

21 से 25 मई तक ऋग्वेद पारायण यज्ञ (आंशिक) का आयोजन किया गया, जिसमें आचार्य आनंद पुरुषार्थी जी होशंगाबाद मुख्य वक्ता व पंडित कुलदीप आर्य जी (बिजनौर) भजनोपदेशक के रूप में आमंत्रित थे। यज्ञ सत्र प्रात: 8 से 11 व प्रवचन सत्र रात्रि कालीन 8य30 से 11 होता था। अंतिम दिन 58 दम्पती 21 यज्ञ वेदियों में पूर्णाहुति करने को उद्यत होकर नयनाभिराम दृश्य उपस्थित कर रहे थे। वे लोग जो कभी भी यज्ञ में बैठे ही नहीं थे आज आकर स्वयं को भाग्यशाली महसूस कर रहे थे। इस बार सूखे की चपेट में पूरा क्षेत्र था अत: सफलता को लेकर आयोजक कुछ आशंकित थे, पर अंतिम रात्रि 11:30 बजे तक जनता जनार्दन के बड़ी संख्या में उपस्थित होकर सत्संग में भाग लेने से आर्यजन प्रसन्नचित्त हो गए। कुछ कन्याओं को आचार्यजी की प्रेरणा से अलियाबाद (आँध्रप्रदेश) के कन्या गुरुकुल आर्ष शोध संस्थान में शास्त्रों के अध्ययनार्थ भेजने की व्यवस्था की गई। आर्य मुनि जी, राम मुनि जी, पंडित कमल किशोर शास्त्री जी, भगवतदत्त जी आदि स्थानीय उपदेशकों ने अपनी गरिमामयी उपस्थिति दर्ज कराई व कुछ ने अपना वक्तव्य भी दिया। सञ्चालन मंत्री रामकृष्ण आर्य ने किया। नन्नू लाल आर्य, मूरत सिंह आर्य, सूर्यप्रकाश आर्य, मनमोद सिंह, मेहरबान सिंह आर्य ने तन मन धन से सहयोग किया।

दीप प्रकाशन

(वैदिक साहित्य के प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता)

शांतिधर्मी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित साहित्य के लिए व शांतिधर्मी की वार्षिक, आजीवन सदस्यता के लिए भी संपर्क कर सकते हैं।

दीपचन्द आर्य

मोबाईल-94161 94371

मिलने का स्थान-
आर्यसमाज घंटाघर, भिवानी

रानी सारन्धो-- पृष्ठ १९ से आगे

अपने-अपने स्थानों पर डटे थे। रानी की चाल सफल हुई। हाथ में धन भी प्रचूर मात्रा में आ गया और मुगल सेना भी मैदान छोड़कर भाग गई।

इस पराजय से औरंगजेब के क्रोध की चिंगारी और भी भड़क उठी। उसी समय बदला लेना उसने ठीक नहीं समझा। पर उसके मन में भीतर ही भीतर एक आग सुलझती रही। कुछ समय पश्चात् औरंग जेब ने बहादुरखाँ को एक बहुत बड़ी सेना के साथ पुन: ओरछा नरेश पर आक्रमण करने भेजा। उन दिनों राजा चंतपराय अस्वस्थ थे। रोग के कारण वे काफी दुर्बल हो चुके थे शरीर में उठने की शक्ति ही न थी। उन्होंने सोचा इस परिस्थिति में किले को छोड़ना ही उचित होगा। इस विषय में रानी से भी परामर्श किया। दोनों का एक ही मत था। उनके पुत्र छत्रसाल ने किले की रक्षा का भार अपने ऊपर लिया। राजा और रानी कुछ सैनिकों के साथ रात को किले के गुप्त द्वार से निकले और चल पड़े किसी अनजान डगर की ओर। राजा पालकी में बैठे और रानी घोड़े पर। रात भर की भाग-दौड़ से राजा थक गए थे। सबने कुछ देर विश्राम करने की योजना बनाई। विश्राम कर भी न पाए थे कि घोड़ों की टाप की आवाज सुनाई दी। शत्रु उनका पीछा कर रहे थे। अब बचाव का तो कोई उपाय ही न था। शत्रु के सम्मुख आत्म-समर्पण कर दें यह भी उनके स्वाभिमानी मन को स्वीकार न था।

राजा ने रानी से कहा-'रानी, जीवन भर तुमने मेरा साथ दिया है, मुझे हर संकट से उबारा है। इस अंतिम बेला में एक बार और मुझे शत्रुओं के हाथ में बचाना होगा।'

रानी- 'वह किस तरह महाराज?'

राजा-'वचन दो, तुम मेरी यह अंतिम अभिलाषा पूर्ण करोगी।'

रानी ने राजा की इच्छा पूर्ण करने का वचन दिया। राजा ने कहा,'आज मेरे इन अशक्त हाथों में तलवार उठाने की भी शक्ति नहीं। यह लो कटार, पहले इसे मेरे कलेजे में भोंक दो, फिर भोंक लेना अपने कलेजे में।'

रानी के लिए यह कठिन परीक्षा का समय था। वह क्या करे? उधर से शत्रु सरपट भागे आ रहे थे। वह अपने ही हाथों अपना सिंदूर मिटा ले? पर शत्रुओं के हाथों में पड़ने की अपेक्षा तो यही मार्ग श्रेयस्कर है। उसने राजा की अंतिम इच्छा पूरी कर दी। शत्रु उनके समीप पहुँचे तो देखा दोनों ही अपनी आन पर बलिदान हो चुके थे। रानी मर कर भी कायर बहादुरखाँ को पराजित कर गई थी।

नया उत्साह! ओ३म् नई खुशी!!

MAHARSHI DAYANAND EDUCATION INSTITUTE, BOHAL

Under the Control & Management of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
(Establish with the Permission of Haryana Govt. vide Sr. Act XXI of 180 Govt. of India)

AN ISO 9001:2008 CERTIFIED ORGANIZATION

202, OLD HOUSING BOARD, BHIWANI-127021 (HAR)

JOB ORIENTED SELF EMOLOYED I.T.I., N.T.T. & OTHER DIPLOMA COURSE

करने व फ्रेंचाईजी लेने के लिए सम्पर्क करें।

संस्थान के सभी कोर्स आत्मनिर्भर, स्वावलम्बी बनाने व रोजगार दिलाने में सहायक हैं।
संस्थान से I.T.I. कोर्स किये अनेक विद्यार्थी सरकारी/गैर सरकारी विभागों में कार्यरत हैं।

बोहल कार्यालय सम्पर्क सूत्र :
09728004587, 09813804026
Website : www.grngo.org

सचिव : नरेश सिहाग, एडवोकेट
चैम्बर नं. 175, जिला अदालत, भिवानी-127021 (हरि.)
09255115175, 09466532152

अन्ततः

कौन है ब्रह्मविद्या का अधिकारी ?

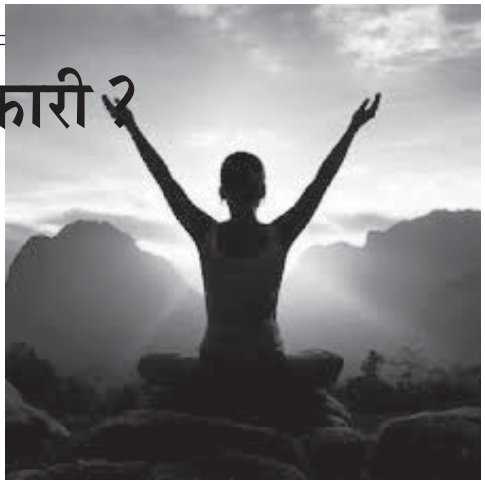

❑महात्मा ओम् मुनि
वैदिक भक्ति साधन आश्रम, आर्यनगर, रोहतक (हरियाणा)

उपनिषद् काल का एक प्रसंग है। एक बार छः जिज्ञासु ब्रह्मचारी किसी ब्रह्मज्ञानी गुरु की तलाश में थे। खोज करते-करते हुए उन्हें ज्ञात हुआ कि उनकी ब्रह्मज्ञान की जिज्ञासा का समाधान महर्षि पिप्पलाद कर सकते हैं। सभी छः जिज्ञासु हाथ में समिधा लेकर महर्षि पिप्पलाद के पास पहुँचे। तब महर्षि पिप्पलाद ने उनसे कहा कि-'**भूयः एवं तपसा, ब्रह्मचर्येण श्रद्धया संवत्सरं संवत्स्यथ यथा कामं प्रश्नान् पृच्छत, यदि विज्ञास्यामः सर्वं ह वो वक्ष्याम इति।**'

यद्यपि आप लोग तपस्या करके, ब्रह्मचर्य का जीवन बिता कर तथा श्रद्धा-पूर्वक यहाँ आये हो, तो भी आप लोग मेरे आश्रम में एक वर्ष तक, मेरे समीप साधना पूर्वक निवास करो। एक वर्ष के पश्चात् जैसा आप उचित समझें, प्रश्न पूछ सकते हैं। अगर उन प्रश्नों का उत्तर या समाधान मैं जानता होऊंगा तो आपको अवश्य बतला दूँगा।

ऋषि पिप्पलाद ने उन छः जिज्ञासुओ के तीन गुणों- 'तप, ब्रह्मचर्य और श्रद्धा' की बात कही है। उन्हें अपने पास एक वर्ष तक रखकर उनके धैर्य, संयम के साथ वे यह भी देखना चाहते थे कि क्या उनके जीवन में-'तप, ब्रह्मचर्य और श्रद्धा' इन तीन गुणों का समावेश है या नहीं और तभी वह उन्हें ब्रह्मज्ञान देने को तैयार हुए।

आईए, अब थोड़ा यह भी जान लें कि ऋषियों के अनुसार तप, ब्रह्मचर्य और श्रद्धा हैं क्या?

'**तप**' का अर्थ है- शारीरिक साधना। ब्रह्मज्ञान के रास्ते पर जो चल रहा हो, उसे तपस्या से गुजरना आवश्यक है, क्योंकि ब्रह्मज्ञान का प्रथम साधन यह हमारा शरीर है। जिसका शरीर रोगी, निर्बल होगा, थोड़ी सी गर्मी-सर्दी सहन नहीं होगी, सिर दर्द ,खाँसी-जुकाम या बुखार हो जायेगा तब वह अध्यात्म के मार्ग पर कैसे चल सकेगा। उसे तो उसका शरीर ही हर समय सताता रहेगा। शरीर की चिंता से मुक्त होकर ही व्यक्ति साधना के पथ पर आगे बढ़ सकता है। ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति कर सकता है।

दूसरा है '**ब्रह्मचर्य**'। यहाँ ब्रह्मचर्य का अर्थ है- विषय-वासनाओं से मुक्त होना अर्थात् मानसिक साधना। जिसका मन हर समय विषयों की तरफ भटकता फिरेगा, तब अध्यात्म के मार्ग पर कैसे चल सकेगा? उसका मन तो उसे प्रत्येक क्षण तंग करता रहेगा। अतः मन पर संयम करके, मन को वासनाओं से मुक्त करके ही व्यक्ति ब्रह्मज्ञान का अधिकारी बनता है।

शरीर और मन के साधन के बाद तीसरी बात आती है- '**श्रद्धा**' की। मन जब संकल्प-विकल्प के जाल से बाहर निकल कर ब्रह्मज्ञान के लक्ष्य पर दृढ़ता से आरूढ़ हो जाता है, तब श्रद्धा की अवस्था प्रकट होती है। जब साधक तप, ब्रह्मचर्य और श्रद्धा के कारण ब्रह्मनिष्ठ तथा ब्रह्मान्वेषण के लिए उत्सुक हो जाता है, तभी वह ब्रह्मज्ञान का अधिकारी बनता है। महर्षि पिप्पलाद का यही तो कथन है-'**भूयः एव तपसा, ब्रह्मचर्येण श्रद्धया संवत्सरं-संवत्स्यथ**', यद्यपि आप लोग तपस्या करके ब्रह्मचर्य का जीवन बिता कर श्रद्धापूर्वक आये हैं, तो भी एक बार और एक वर्ष के लिए मेरे पास निवास करो। बस '**तप, ब्रह्मचर्य और श्रद्धा**' यही एक मात्र उपाय है, रास्ता है, ब्रह्मज्ञान प्राप्ति का। इसके अतिरिक्त '**नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।**' इसके अतिरिक्त अन्य काई रास्ता नहीं है।

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक चन्द्रभानु आर्य द्वारा अपने स्वामित्व में, ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६ १०२ (हरि०) से २४-०६-२०१४ को प्रकाशित।

।।ओ३म्।।

M : 09416717938
08607381473

सुलतान सिंह आर्य

उपप्रधान

अ.भा.जांगिड़ ब्राह्मण प्रादेशिक सभा हरियाणा

पूर्व प्रधान हरियाणा आर्य युवक परिषद (रजि.) जिला जीन्द

भारतीय जीवन बीमा निगम LIC

जीवन बीमा से सम्बन्धित कोई भी जानकारी नया बीमा, पुराना बीमा
चालू करवाने व लोन लेने के लिए सम्पर्क करें :-

जीवन बीमा - आपके परिवार का भविष्य जीवन के साथ भी - जीवन के बाद भी।

राम नगर, नजदीक आर्य समाज मन्दिर, रोहतक रोड़, जीन्द

ओ३म्

M.A. : 9992025406
P. : 9728293962

NDA No. : 236964
DL No. : 2064

अशोका मैडिकल हॉल

अशोक कुमार आर्य Pharmacist, आयुर्वेद रत्न
R.M.P.M.B.M.S.

हमारे यहाँ पर नजला, पथरी, ल्यूकोरिया,
शारीरिक कमजोरी, दाद, खारीश का
आयुर्वेदिक देशी जड़ी बूटियों द्वारा ईलाज

विशेष : हमारे यहाँ जीवन दायिनी च्यवनप्राश मिलता है।

अशोका मैडिकल हाल नजदीक वैद्य रामचन्द्र हस्पताल, पटियाला चौक, जीन्द

R.N.I. No. 70866/99 शान्तिधर्मी हिन्दी मासिक (जुलाई, २०१४) P.R. No. : PKL 150-A/2014-16

ओ३म्

शांतिधर्मी एक अद्वितीय पत्रिका है

इसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिये स्वस्थ और सुरूचिपूर्ण सामग्री होती है।

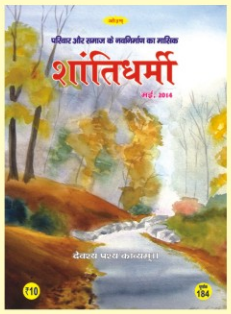

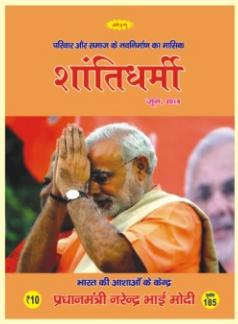

- शांतिधर्मी में धर्म-दर्शन के रहस्य, राष्ट्र व समाज की ज्वलंत समस्याओं पर अधिकारी विद्वानों के श्रेष्ठ विचार होते हैं।
- शांतिधर्मी भारतवर्ष के गौरवपूर्ण इतिहास की झलक दिखाता है।
- शांतिधर्मी वह मार्ग दिखाता है, जिसे पाने के लिये लोग भटक रहे हैं। परिवार में समाज में सह-अस्तित्व व अन्तरात्मा में सुख शांति का संदेशवाहक है।
- शांतिधर्मी उस अध्यात्म का प्रचार करता है-जिसे अपनाने में देश-काल, जाति, मजहब, सम्प्रदाय की सीमाएँ आड़े नहीं आतीं। यह सच्चे ईश्वरीय ज्ञान का प्रचारक है।
- शांतिधर्मी स्वाध्याय भी है और स्वस्थ मनोरंजन का साधन भी।
- शांतिधर्मी प्रत्येक श्रेष्ठ-धार्मिक-राष्ट्रप्रेमी-मानवतावादी-व्यक्ति के लिये एक विचार-सूत्र है। प्रत्येक श्रेष्ठ परिवार का आभूषण है।

शांतिधर्मी पढ़िये-

अपने प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, ईश्वर के प्रति सर्वांगीण दायित्वों को जानिये।

जीवन के जटिल व गूढ़ रहस्यों को सहज ही सुलझाईये।

शान्तिधर्मी कार्यालय

756/3, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक)

जीन्द-126102 (हरियाणा)

मो. 09416253826 E-mail : shantidharmijind@gmail.com